मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

देश के लिये सबसे बड़ा ख़तरा

''हज़रात! इस देश में जो व्यवहारिक बीमारी फैली हुई है, वह यहां के लिये सबसे बड़ा ख़तरा है। अफ़सानो अव्यवहारिक बातें फैला रहे हैं। हमारी नई नस्लों को लाज–शर्म से दूर करने के इंजेक्शन दिये जा रहे हैं। सिनेमा के पर्दों पर पाप दिखाया जा रहा है। आंखों से, कानों से दिल में पाप उतारा जा रहा है। अखबार और पत्रिकाएं पाप का खुल्लमखुल्ला प्रचार कर रहे हैं तथा इसका कोई तोड़ नहीं। हम ऐलान करके कहते हैं, हमें आज़ादी मिली, अल्लाह का बड़ा उपकार है, लेकिन यदि हम आचरण पर नियन्त्रण नहीं रख सकते तो आज़ादी भी क़ायम नहीं रह सकतीं।''

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

MAR 18

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

₹10/-

मुस्लिम सामुदायिक विशेषता की सुरक्षा

आप ऐसे मुल्क में हैं जिसमें अधिक संख्या ग़ैर मुस्लिमों की है। यह लोकतान्त्रिक देश है और यहां संविधान सभाएं क़ानून का निर्माण करती हैं। जब यह मुल्क लोकतान्त्रिक है तो पार्ल्यामेंट ही क़ानून बनायेगी और लोकतन्त्र का यह नियम है कि बहुसंख्यकों की राय और समर्थन से क़ानून बनता है। इसलिए हर वक़्त इसका ख़तरा है कि ऐसे क़ानून बने जो हमारी मूलभूत आस्थाओं, हमारे जज़्बात और हमारी ज़रूरतों के ख़िलाफ़ (बदनियती से कम और अज्ञानता से ज़्यादा) बनें, यह भी नहीं भूलना चाहिये कि धार्मिक, सांस्कृतिक और भाषा की बुनियादों पर जारहाना हयाइयत और कुल्लियत पसंदी की तहरीकें भी ज़ोर–शोर से चल रही हैं। अब आपका काम यह है कि ऐसे सेक्यूलर और लोकतान्त्रिक देश में अपने मिल्ली तख़्शख़ुस (सामुदायिक पहचान अथवा विशेषता) की हिफ़ाज़त क़ानूनी तरीक़े पर करें। आप हिन्दुस्तान के वफ़ादार, मुफ़ीद, कारामद और उसके ज़रूरी जुज़ होने की हैसियत से अपनी इफ़ादियत व अहमियत साबित करें, और मुतालिबा करें कि कोई क़ानून हमारी शरीअत, आसमानी किताबों और हमारे अक़ायद के ख़िलाफ़ नहीं बनना चाहिये। आप इसी के साथ यह भी साबित करें कि ख़िलाफ़े शरीअत क़ानून बनने से आपको उससे ज़्यादा अज़ीयत होती है, और आपका मिल्ली वजूद इससे ज़्यादा ख़तरे में पड़ जाता है, जितना खाना रोकने से, कोई जम्हूरी हुकूमत किसी अक़्लियत और किसी फ़िरक़े की ग़ज़ाई ज़रूरतों को नहीं रोक सकती, और कोई हुकूमत चाहे कितनी ही ताक़तवर हो, यह क़ानून नहीं बना सकती कि फ़ला फ़िरक़े को ग़ल्ले की फ़राहमी रोक दी जाये, या बाज़ार में उसको दुकान खोलने की इजाज़त न दी जाये, या उसके बच्चों पर तालीम और तालीम गाहों के दरवाज़े बन्द कर दिये जायें, ऐसा अगर होने लगे तो आप क़यामत बरपा कर सकते हैं।आप साबित कर दें कि इस क़ानून और इस नये निज़ामे तालीम से आपको घुटन हो रही है, जैसे मछली को पानी से बाहर निकालकर रखने से उसका दम घुटता है, आपके चेहरे के उतार–चढ़ाव, हरकात व सुकूनात से मालूम हो जाये कि आपकी सेहत और तवानाई और कारकरदगी पर असर पड़ा है। और यह महसूस कर लिया जाये कि यह एक मग़्मूम क़ौम के लोग हैं। इस नये क़ानून से उनका दम घुट रहा है। यह उनकी आइन्दा नस्ल के क़त्ल के मुतरादिफ़ है। यह आपको ख़ुसूल के साथ अमली तौर पर ऐसी कैफ़ियत से करना होगा कि हर शख़्स स्टेशनों, पार्कों और बसों में आपकी बेचैनी को महसूस करे, अगर आधा नही तो कम से कम उसका चौथाई हिस्सा साबित करना होगा। आपको यक़ीन दिलाता हूं कि एक हफ़्ते भी ऐसा क़ानून नहीं चल सकता, मैंने दुनिया के आइनों और दस्तूरे हुकूमत का मुताला किया है और जम्हूरियतों की तारीख़ पढ़ी है, इसलिए यह बात कह रहा हूं।''

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी रह०

بسم الله الرحمن الرحيم

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक:३ मार्च २०१८ ई० वर्ष:१०

संरक्षक

हज़रत मौलाना
सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी
(अध्यक्ष - दारे अरफ़ात)

निरीक्षक

मौ० वाज़ेह रशीद हसनी नदवी
जनरल सेकेरेट्री- दारे अरफ़ात

सम्पादक

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सम्पादकीय मण्डल

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी
अब्दुस्सुबहान नाखुदा नदवी
महमूद हसन हसनी नदवी

सह सम्पादक

मो० नफ़ीस ख़ाँ नदवी

अनुवादक

मोहम्मद सैफ़

मुद्रक

मो० हसन नदवी

इस अंक में:

मुसलमानों का कर्तव्य.....२
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

रसूलुल्लाह (स०अ०) का मक्की तथा मदनी जीवन.....३
हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

नई चुनौतियों का सामना करने हेतु नई रणनीति.....५
मौलाना सैय्यद मुहम्मद वाज़ेह हसनी नदवी

उम्मते मुस्लिमा का स्थान और उसकी मांग.....९
मौलाना अब्दुल्लाह हसनी नदवी रह०

एकेश्वरवाद क्या है?.....१०
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

फ़साद व सलाह की बुनियाद.....१३
अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

मैय्यत को गुस्ल दिलाने के शरई एहकाम.....१६
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

ख़ुदा का ख़ौफ़.....१८
मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

उत्पीड़ित भावना की बीमारी.....१९
मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

E-Mail: markazulimam@gmail.com www.abulhasanalinadwi.org

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल-नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली,यू०पी०.229001

प्रति अंक 10रू

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला खॉ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण,मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल-नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

वार्षिक 100रू०

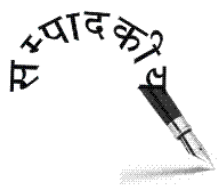

सम्पादकीय

मुसलमानों का कर्तव्य

● बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

यह उम्मत उम्मत–ए–दावत है और यही इसके ख़ैर उम्मत होने की खुली निशानियों में से है। दावत (लोगों को सत्यमार्ग बताना) ही उसका बचाव है। जो समुदाय लोगों को सत्यमार्ग की ओर बुलाने का स्वभाव रखते हैं वे जीवित रहते हैं, वरना वे बर्फ़ की तरह पिघल जाते हैं। इस उम्मत को अल्लाह तआला ने क़यामत तक ज़िन्दा रहने के लिये पैदा किया है। इसके लिये आख़िरी नबी हज़रत मुहम्मद (स0अ0) के भेजने के साथ–साथ अल्लाह तआला ने दावत का स्वभाव रखने वाले लोगों का एक समूह तैयार कर दिया जिसने दुनिया के बड़े हिस्से को बहुत कम समय में अपनी दावत से परिचित करा दिया। उनका एक–एक व्यक्ति स्वयं में एक अभियान बन गया। जो काम बड़े–बड़े आंदोलन नहीं कर सकते वह काम एक–एक व्यक्ति ने करके दिखाया। यह उम्मत जब तक अपने दावती मिशन के साथ आगे बढ़ती रही और इसको कोई ताक़त रोक न सकी। दावत की इस ताक़त ने दुनिया के सुधार का काम किया। लेकिन जब से उसकी दावती स्प्रिट में कमी आने लगी, हालात बदलने लगे। धीरे–धीरे वही उम्मत जिसका नाम प्रचलित सिक्कों की भांति चलता था, जिसके रोब से साम्राज्य कांपते थे, यूरोप जिसका ग़ुलाम होकर अपने को गौरान्वित महसूस करता था, जिसके अविष्कारों पर आज की उन्नति का आधार है। उसने अपना महत्व खो दिया। क़ौमें उस पर टूट पड़ीं। उसकी ताक़त ताश के पत्तों की तरह बिखर गयी। ख़िलाफ़त–ए–इस्लामिया का निशान मिट गया और ग़ुलामों की मानसिकता रखने वाले शासक बना दिये गये जो पूरे इस्लामी इतिहास के लिये किसी कलंक के टीके से कम नहीं है।

दावत अपने में हो या दूसरों में, यह एक महत्वपूर्ण धार्मिक कार्य है। उम्मत की सुरक्षा व बचाव का राज़ भी इसी में छिपा हुआ है। दुनिया के बचाव की मौजूदा कोशिशों में यह सोच भी पेश की जाती है कि हर मज़हब वाला अपने मज़हब पर अमल करे। कोई किसी को न रोके न टोके, ताकि हर व्यक्ति आज़ादी के साथ ज़िन्दगी गुज़ार सके। इस्लाम में इसका तसव्वुर भी मुमकिन नहीं। हो सकता है कि किसी ज़रूरी मस्लहत की ख़ातिर किसी इलाक़े में महदूद वक़्त के लिये उस पर अमल कर लिया जाये लेकिन इस्लामी स्वभाव से उसका कोई संबंध नहीं। भलाई की शिक्षा देना, उसका माहौल बनाना, उसको आम करने का प्रयास करना, यह सब मुसलमानों का कर्तव्य है। बुराई को बुराई समझना, उसको बुरा कहना, माहौल को उससे पाक करने की कोशिश करना, मुसलमानों की ज़िम्मेदारी है। हदीस में आता है: ''तुममें जो बुराई देखे वह संभव हो तो हाथ से रोक दे, वरना ज़बान से रोक दे, और यह भी न हो सके तो दिल में उसे बुरा समझे (और रोकने का इरादा रखे) और यह ईमान का सबसे कमज़ोर दर्जा है।''

इस्लाम की दावत के यह वे दोनों हिस्से हैं, जिन दोनो से दावत जुड़ी हुई है। इसमें किसी एक चीज़ पर चोट पड़ती है तो दावत अपूर्ण हो जाती है। कम व अधिक किया जा सकता है। हालात का ध्यान रखकर कार्य करने की आज्ञा है, लेकिन काट–छांट कर अलग करने की आदेश नहीं दिया जा सकता।

वर्तमान मुस्लिम समाज में यह ख़राबी बढ़ती चली जा रही है कि बुराइयों को देखकर दिल नहीं कांपता, इसका एहसास ख़त्म होता चला जा रहा है, वह समाज किसी मुसलमान देश का हो या दूसरे देश की मुस्लिम आबादियों का, कोई बुराई दाख़िल होती है, फिर वह बढ़ते–बढ़ते सबको अपने लपेटे में ले लेती है, ज़ाहिर तौर पर दीनदार लोग इसमें मुब्तिला हो जाते हैं, इसकी बुनियादी वजह यह है कि शुरूआती समय में ही इसकी रोकथाम की कोशिश नहीं की जाती है। यह एक ऐसा ख़तरनाक सिलसिला है जो इरतिदाद (अधर्म का मार्ग) तक पहुंच सकता है। और इस दौर में इस्लाम दुश्मन ताक़तों ने यही हरबा अपना रखा है कि मुसलमानों में एक–एक करके ऐसी बुराइयां आम की जायें कि धीरे–धीरे उनकी इस्लामी पहचान ख़त्म होकर रह जाये और कुछ अर्से बाद उनके अन्दर इसका एहसास ख़त्म हो जाये।

आज इलेक्ट्रानिक मीडिया और प्रिन्ट मीडिया के द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर माहौल को बिगाड़ने की कोशिश हो रही है और उसका सबसे बड़ा निशाना मुसलमान हैं। दीन के दुश्मनों का निशाना यह है कि मुसलमानों को हर क्षेत्र में ऐसा करप्ट कर दिया जाये कि वे खोखले होकर रह जायें कि उनमें किसी चीज़ की ताक़त न बाक़ी रहे। इसी ख़तरनाक साज़िश से मुक़ाबले का बड़ा हथियार यह दावत है। मुसलमानों को जागरुक कर दिया जाये तो कोई भी मुसलमानों को अपना शिकार नहीं बना सकता।

रसूलुल्लाह (स0अ0) का मक्की तथा मदनी जीवन

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

रसूलुल्लाह (स0अ0) की जीवनी से जीवन के हर भाग में मार्गदर्शन प्राप्त होता है। रसूलुल्लाह (स0अ0) के आने के बाद रसूलुल्लाह (स0अ0) की ज़िन्दगी मक्की और मदनी दौर में विभाजित है और उन दोनों दौर में हर दौर के लिये हिदायत का सामान है।

मक्की दौर में मालूम होता है कि उस दौर में मुसलमानों की पहली ज़िम्मेदारी यह थी कि वे अपने ईमान को मज़बूत करें और लोगों के सामने दीन प्रस्तुत करें और ऐसा करने में जो भी परेशानी हो उसको बर्दाश्त करें, क्योंकि उनका यह तकलीफ़ बर्दाश्त करना अल्लाह के लिये होगा। जिस पर अल्लाह तआला की तरफ़ से उनको ईनाम दिया जायेगा। इसके साथ–साथ उनकी वास्तविक चिन्ता लोगों तक इस्लाम धर्म पहुंचाने की हो और वे लोगों को यह हक़ीक़त समझा दें कि अगर वे इस धर्म को मानते हैं तो वह अल्लाह के नेक बन्दे बन सकते हैं और आख़िरत (परलोक के जीवन) में कामयाब हो सकते हैं तथा हज़रत इब्राहीम (अलैहिस्सलाम) से उनका संबंध सही अर्थों में जुड़ सकता है, जिसका उनको दावा भी है। फिर उनको वे सारे अधिकार प्राप्त हो जायेंगे जो अल्लाह तआला की तरफ़ से ईमान वालों को दिये जाते हैं और यदि वे सही बात को समझने के बाद भी नहीं मानते हैं और ज़िद पर उतर आते हैं तो वे यह हक़ीक़त भी समझ लें कि उनका ठिकाना जहन्नम (नर्क) होगा।

रसूलुल्लाह (स0अ0) की जीवनी से मालूम होता है कि मदीना हिजरत (पलायन) के बाद मुसलमानों के जीवन यापन के तरीक़े में बदलाव हुआ और इस्लाम को असाधारण विजय प्राप्त हुई। मुसलमानों को वर्चस्व प्राप्त हुआ और मदीना मुनव्वरा जो अब तक यसरिब के नाम से मशहूर था वह इस्लाम का केन्द्र बन गया। अतः मदनी जीवन में इस बात के अवसर अधिक हो गये थे कि यहां से बैठकर इस्लाम की दावत लोगों तक पहुंचायी जाये और धर्म का प्रचार किया जाये और अगर कोई दुश्मन ताक़त की बुनियाद पर हमला करे तो उस ताक़त का जवाब भी दिया जाये। इसीलिए मदनी दौर में इस बात की आज्ञा भी दे दी गयी कि अब मुसलमानों को भी चाहिये कि वे अपनी सुरक्षा और अपने दीन की मज़बूती के लिये ताक़त का इस्तेमाल करें।

अर्थात मदीना की ज़िन्दगी में दो पहलू सामने आए। एक यह कि इस्लाम के संदेश को सर्वसाधारण तक पहुंचाना है और दूसरा यह कि अगर कोई इस राह में रूकावट डालता है तो ताक़त के इस्तेमाल के साथ उसका मुक़ाबला करना है। यानि जो व्यक्ति या क़बीला या शहर अथवा देश दुश्मनी करेगा और मुसलमानों पर हमला करेगा या मुसलमानों को नुक़सान पहुचांने की कोशिश करेगा तो उसको ताक़त के साथ रोका जायेगा और उसका भरपूर जवाब भी दिया जायेगा। यही कारण है कि इसके नतीजे में विभिन्न जंगे हुईं और ग़ज़वा–ए–बद्र (बद्र की जंग) से लेकर ग़ज़वा–ए–तबूक (तबूक की जंग) तक यह सिलसिला चला। सन् 2 हिजरी में ग़ज़वा–ए–बद्र हुआ। उस वक़्त मुसलमान बहुत कमज़ोर थे। वह बद्र नामक जगह पर लड़ने के इरादे से नहीं गये थे बल्कि उस क़ाफ़िले को रोकने के लिये गये थे जो क़ुरैश का काफ़िला सीरिया से व्यापारिक माल लेकर आ रहा था। उसके वास्ते थोड़े से लोग भी काफ़ी थे। किसी बड़ी तैयारी की ज़रूरत न थी। इसलिए थोड़ी तैयारी के साथ आप (स0अ0) बद्र तश्रीफ़ ले गये लेकिन बाद में आप (स0अ0) को रास्ते ही में ईशवाणी (वही) द्वारा यह मालूम हुआ कि मक्का से काफ़िरों की सेना मुसलमानों के मुक़ाबले में लड़ने आ रही है। अतः ऐसी परिस्थिति में दो ही बातें हो सकती थीं, एक तो यह कि उनको रास्ते में रोककर उनसे मुक़ाबला किया जाये। दूसरा यह कि आप (स0अ0) मदीना वापस आ जायें। लेकिन इससे एहसास कमतरी पैदा होने का ख़तरा था और यह भी संभावना थी कि कहीं वे लोग मदीना पहुंचकर हमला न कर दें। इसलिए उचित यही लगा कि मुक़ाबला किया जाये। यही अल्लाह की मर्ज़ी भी थी कि मुक़ाबला ही हो जाये ताकि इस्लाम के दुश्मनों को इस्लाम की ताक़त का अंदाज़ा हो सके।

लेकिन जंग करने का मुकम्मल इरादा करने के बावजूद भी नबी–ए–रहमत (स0अ0) ने अपने असहाब (साथियों) से मशविरा किया कि इनकी जंग के मुताबिक़ राय है। क्योंकि आप (स0अ0) अपने साथियों पर भार नहीं डालना चाहते थे। अतः जब आप (स0अ0) को सबकी तरफ़ से जवाब मिल गया और यह अनुमान हो गया कि यह सब जंग के लिये तैयार है और जो ख़ुदा और रसूल का हुक्म होगा आपके जांनिसार सहाबा वही करेंगे और इस सिलसिले में वह अपनी जान की ज़रा भी परवाह नहीं करेंगे, तब आप (स0अ0) ने दुश्मनों से मुक़ाबले का फ़ैसला किया। इस जंग में मुसलमानों की ज़ाहिरी तैयारी मुकम्मल

होने के साथ नुसरते इलाही भी मुकम्मत तौर पर शामिले हाल रही। जिसका नतीजा यह हुआ कि कुफ़्फ़ार पराजित होकर भाग गये। यही वह पहली जंग थी जो इस्लाम की जीत का आगाज़ थी। इससे मुसलमानों की हिम्मते बढ़ीं और उनके हौसले भी बुलन्द हुए और काफ़िरों को भी यह अंदाज़ा हो गया कि अब हम मुसलमानों को इतनी आसानी से मिटा नहीं सकते और यह भी बख़ूबी अंदाज़ा हो गया कि वह मक्का मुकर्रमा में मुसलमानों के साथ जो बर्ताव करते थे वह मदीना में रहते हुए वह बर्ताव करना नामुमकिन है।

इसीलिए बहुत से लोगों को ख़्याल हुआ कि अब हमको अपनी पॉलिसी बदल लेनी चाहिये और मुहम्मद (स0अ0) के दीन ही की इब्दिा कर लेनी चाहिये। वरना जंगों का यह सिलसिले जारी रहेगा। लेकिन ख़ानदानी नुख़ूव्वत और दीगर माद्दी मुहब्बतों के सबब ऐसा न हो सका और जंगों का सिलसिला क़ायम रहा। यद्यपि मुसलमानों को हर समय अल्लाह की तरफ़ से मार्गदर्शन और हिदायतें मिलती रहीं जिनसे उन्हें ख़ूब फ़ायदा हुआ और एक क़रीबी अर्से में वह दिन भी आया कि जिस मक्का से बहुत ही कमज़ोर स्थिति से हिजरत (पलायन) की थी उसी मक्का में विजयी होकर प्रवेश किया।

मदनी जीवन जोकि दस साल पर आधारित है, यद्यपि इस दौर में अधिकांश समय जंगी मुहिमों में व्यतीत हुआ लेकिन यही वह समय है जिसमें ख़ासतौर पर ज़िन्दगी के गुज़ारने के वह तमाम मार्गदर्शक नियम उपलब्ध करा दिये गये जिनकी इन्सानी ज़िन्दगी में क़यामत तक के लिये ज़रूरत पड़ सकती है। अतः मदीना मुनव्वरा में मुसलमानों के आबाद होने के बाद एक सभ्य मानवीय समाज का अस्तित्व हुआ और लोग इस्लाम से प्रभावित हुए और इस्लाम की जड़ें लोगों के सीनों में पेवस्त हो गयीं। बेशुमार दानिश जोयान हक़्क़े इस्लाम क़ुबूल करने पर मजबूर हुए।

इसी तरह मदीना मुनव्वरा में जो यहूद आबाद थे उनसे आपसी समझौते हुए ताकि ज़िन्दगी में अमन व सुकून बना रह सके और जब इन समझौतों को तोड़ा गया तो सख़्त कार्यवाहियां भी की गयीं। लेकिन उनके अलावा भी कुछ ऐसे लोग थे जिनके दिलों पर इस्लाम के प्रभावपूर्ण होने से आरा चलता था। वह किसी भी सूरत में यह गवारा नहीं कर रहे थे कि इस्लामी समाज उन्नति करे। अतः उनहोंने अपनी पॉलिसी इस तरह बदली कि ऊपर से वे मुसलमानों के गिरोह में शामिल हो गये मगर अन्दर से इस्लाम से उनका कोई संबंध न था। क़ुरआन मजीद में इन लोगों को 'मुनाफ़िक़' के शब्द से याद किया गया है। इनका काम यह था कि यह इस्लाम की किसी ख़ूबसूरत बात में शक पैदा करने की कोशिश करते रहते थे और मामूली से मामूली बातों पर भी आलोचना में कोई कसर न छोड़ते थे। उनकी मक्कारियों से इस्लामी समाज को बहुत नुक़सान पहुंचा। क़ुरआन में मुनाफ़िक़ों के इस रवैये की तरफ़ इशारा करते हुए ईमानवालों को आदेश दिया गया कि कहीं वह भी ईमान के सिलसिले में तरद्दुद का शिकर न हो जायें। उनको चाहिये कि अल्लाह पर ईमान मज़बूत रखें। जिस वक़्त भी अल्लाह और उसके रसूल (स0अ0) का जो हुक्म हो उसका पालन करने में ज़रा भी देर न करें, क्योंकि अगर ज़रा भी तरद्दुद हुआ तो ईमान ख़तरे में पड़ जायेगा और फिर बहुत बुरा अंजाम होगा।

क़ुरआन मजीद की इन स्पष्ट हिदायतों के बाद तमाम इमान वाले इतने चौकन्ना हो गये कि अल्लाह और उसके रसूल (स0अ0) की एक–एक बात पर हमेशा कान धरे रहते थे। जो बात भी आप (स0अ0) कहते सहाबा–ए–किराम फ़ौरन उसको पूरा करते और कभी–कभी फ़ते मुहब्बता और जज़्बो अमल की बुनियाद पर वह यह भी न देखते कि आप (स0अ0) का यह कथन किसी के साथ ख़ास है या एक आम बात है बल्कि यह अंदाज़ा लगाना मुश्किल होता था कि आप (स0अ0) की ज़बान–ए–मुबारक से कोई बात पहले निकली या सहाबा–ए–किराम (रज़ि0) से अमल पहले हुआ।

एक बार किसी मसलहत के मद्देनज़र आप (स0अ0) ने किसी इलाक़े में मुसलमानों की एक फ़ौज भेजने का इरादा किया जिसमें जाने के लिये तमाम सहाबा–ए–किराम (रज़ि0) तैयार हो गये जिस पर यह हुक्म नाज़िल हुआ कि वहां सबका जाना ज़रूरी नहीं बल्कि कुछ आदमियों का जाना ही ज़रूरी है इसलिए कि अगर सभी चले गये तो जिन्दगी की दूसरी ज़रूरते को कौन पूरा करेगा। ज़रूरत इस बात की है कि कुछ लोग ऐसे भी हों जो दीन को सीखें और सोहबते नबवी में रहकर दीन की तालीम हासिल करें। ताकि खुद भी अमल कर सकें और अपने दूसरे मुसलमानों को जो यहां मौजूद नहीं है उनको भी पहुचा दें। अर्थात जिस तरह मैदाने जंग में जाना ज़रूरी है ताकि वहां दुश्मनों पर जीत हासिल की जा सके उसी तरह दीन की तालीम हासिल करना भी ज़रूरी है। सीरत के इस इजमाली जायज़े से पता चला कि हर जगह के हालात अलग होते हैं जिनको ध्यान में रखकर ही दावत का काम करना चाहिये। इसी तरह हर मौक़े की नज़ाकतों को समझना भी दावत के काम में बेहद ज़रूरी है।

नयी चुनौतियों का सामना करने हेतु नई रणनीति की आवश्यकता

मौलाना सैय्यद मुहम्मद वाज़ेह रशीद हसनी नदवी

मुस्लिम समुदाय को आज जिस कोलाहल व अशांति का सामना करना पड़ रहा है, इतिहास में उसका उदाहरण नहीं मिलता। दुनिया के हर भू–भाग में मुस्लिम समुदाय को विभिन्न समस्याओं, कठिनाइयों, भय तथा चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। दुश्मन इस्लाम तथा मुसलमानों को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिये हर तरह के हथकंडे और साधन अपना रहे हैं। दूसरी तरफ़ आन्तरिक मतभेद, अव्यवस्था, फूट, मसलकी टकराव तथा गिरोही विरोधाभास ने मुस्लिम समुदाय को खोखला कर दिया है।

मुसलमान आज ज़िन्दगी के हर मैदान में मुश्किलों व ख़तरों के चंगुल में फंसे हैं। सामाजिक, सांस्कृति, भाषीय, राजनीतिक, आर्थिक तथा आस्था के आधार पर चुनौतियों व संकटों का सामना है। दुनिया के हर क्षेत्र में मुसलमानों पर जीवन तंग किया जा रहा है, चाहे वे अल्पसंख्यक हों या बहुसंख्यक। चीन से लेकर अमरीका तक बल्कि पूरब व पश्चिम में मुसलमान संकट के दौर से गुज़र रहे हैं। मुसलमानों के सामने की यह वर्तमान परिस्थिति और यह मुश्किलें कोई नई बात नहीं है; बल्कि मुसलमान पहले भी दुनिया के विभिन्न हिस्सों में बार–बार इस प्रकार के कोलाहल व अशांतिपूर्ण समय का सामना कर चुके हैं। अगर वे एक जगह आज़माइशों व ख़तरों से गुज़र रहे होते तो दूसरी जगह सत्ता पर क़ाबिज़ होते। अतः कहा जाता था कि इस्लाम का सूरज अगर दुनिया के एक हिस्से में डूबता है तो दूसरे हिस्से में उदय हो रहा होता है। इतिहास में ऐसे कई उदाहरण हैं।

अतीत में मुसलमानों पर आने वाला संकट सैन्य तथा जातीय संकट था। जिनके परिणाम सीमित हुआ करते थे। इसी के साथ–साथ मुसलमानो में क्रान्ति तथा जागरुकता के तत्व पैदा हुए। परन्तु मुसलमान आज जिन समस्याओं का सामना कर रहे हैं, वह अतीत की समस्याओं से भिन्न तथा अलग हैं। बल्कि मौजूदा हालात साम्राज्यवादी युग से भिन्न है। जबकि इससे पहले सारी इस्लामी दुनिया साम्राज्यवाद के क़ब्ज़े में थी।

एक तरफ़ परिस्थिति यह है कि इस्लाम को स्वीकार करने वालों की एक लहर सी चल रही है और अब उन इलाक़ों में भी इस्लाम अपने वुजूद को मनवा रहा है जहां पहले इस्लाम का कोई नामलेवा नहीं था। पूरब में मस्जिदों, दीनी मदरसों, इस्लामिक सेन्टर्स और धार्मिक संस्थाओं की स्थापना एक आम सी बात है। पूरब के बहुत से सरकारी स्कूलों में इस्लामी शिक्षा तथा इस्लामी शरीअत पर अमल की आज्ञा दी जा रही है। जबकि अतीत में पूरब में इस तरह के इस्लामी आसार का वुजूद नहीं था। ग़ैर मुस्लिम लोगों में कुरआन करीम की मक़बूलियत दिन–प्रतिदिन बढ़ रही है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की यूनिवर्सिटयों में इस्लाम के अध्ययन की व्यवस्था हो रही हैं। अतीत की तुलना में में आज इस्लाम के अध्ययन के अवसर अधिक उपलब्ध है तथा दुनिया की विभिन्न भाषाओं में कुरआन करीम के अनुवाद किये जा रहे हैं। निसंदेह यह स्थिति बड़ी प्रसन्नचित्त है। प्रचार–प्रसार की कोशिशों तथा कार्यवाहियों के परिणाम भी अच्छे और लाभकारी हो रहे हैं और जीवन के विभिन्न भागों में उसके प्रभाव प्रकट हो रहे हैं। विशेषतयः 9/11 की घटना तथा डेनमार्क में अपमानजनक कार्टूनों के प्रचार के बाद से इस्लाम के अध्ययन का रूझान बढ़ा है।

लेकिन इसके साथ–साथ इस्लाम के विरुद्ध अन्तर्राष्ट्री स्तर पर साज़िशें भी ज़ोरों पर हैं। इस्लामी विशेषताओं को मिटाने और ख़त्म करने के लिये वैचारिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा सैन्य हर प्रकार के साधनों का प्रयोग किया जा रहा है। यह अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की साज़िशें पूरे मुस्लिम समुदाय के लिये ख़तरे का कारण हैं। इस्लाम और मुसलमानों के ख़िलाफ़ मीडिया तथा नये संपर्क क्रान्ति के द्वारा ज़बरदस्त भ्रामक प्रोपगन्डा किया जा रहा है।

यह साज़िशें एक ही समय में सैनिक, राजनीतिक,

वैचारिक तथा सांस्कृतिक हमलो की शक्ल में जारी हैं। उस पर तमाशा यह कि मुसलमानों के सामने बचाव के सभी दरवाज़े बन्द कर दिये गये हैं। यहां तक कि अपने को बेगुनाह भी साबित नहीं कर सकते। मुसलमानों को ज़बरदस्त प्रोपगन्डा का सामना करना पड़ रहा है। जिसका वह साधन तथा सामर्थ्य के बावजूद मुक़ाबला नहीं कर सकते। हालांकि वे सत्यमार्ग पर हैं तथा उन पर मीडिया के ज़रिये लगाये जाने वाले तमाम आरोपों से वे कोसों दूर हैं। लेकिन उनके पास ताक़तवर तथा प्रभावपूर्ण मीडिया नहीं है। जबकि दुश्मन शैक्षिक तथा मानवीय हर प्रकार के साधनों पर क़ाबिज़ है और खुद मुसलमान हुकूमतें उनके ख़िलाफ़ हैं। इसलिए कि यह हुकूमतें डर से या किसी लालचवश इस्लाम की दुश्मन अन्तर्राष्ट्रीय ताक़तों के अधीन हैं। सबसे ख़तरनाक बात यह है कि मुस्लिम देशों के पाठ्यक्रम से उन विषयों को निकाला जा रहा है जिसने छात्रों में इस्लामी जागरूकता व जानकारी और इस्लामी फ़िक्र व रूझान पैदा होता है। इसका मक़सद यह है कि मुसलमानों को इस्लामी एहसास व जानकारी से अपरिचित करा दिया जाये। ताकि वे साज़िशों के बारे में सोच न सकें। पूरी दुनिया में इस्लामी मदरसों तथा दीनी मकतबों के ख़िलाफ़ मुहिम चलायी जा रही है और इन मदरसों को लोगों से मिलने वाली मदद पर पाबन्दी लगायी जा रही है।

मुस्लिम समुदाय के ख़िलाफ़ अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जो जंग जारी है वह मानसिकता तथा जागरुकता की जंग है। जो ऐसाबी (स्नायविक) जंग से ज़्यादा ख़तरनाक है बल्कि शीत युद्ध से भी ज़्यादा ख़तरनाक है, जोकि सोवियत यूनियन के ज़माने में पश्चिमी पूरब और पूर्वी पूरब के मध्य जारी थी। इस्लाम विरोधी शक्तियां कला व शिल्प तथा साहित्य व लिट्रेचर के माध्यम से इस्लाम को ऐसे रूप में प्रस्तुत करना चाहती हैं जो उनके विचारों और नज़रिये के अनुसार हो। नई खोजों और रिर्पोटों के निरीक्षण से मालूम होता है कि इस्लाम के दुश्मनों ने इस्लाम और मुसलामनों पर हमला करने के लिये नई पॉलिसी बनायी है। यह पॉलिसी साहित्य व लिट्रेचर, शिक्षा व शिल्प, शेर व शायरी, व्यंग्य व कटाक्ष, लतीफ़ों व चुटकुलों, कार्टूनों, लिबास, घरेलू साज़ो सामान तथा मनोरंजन के दूसरे माध्यमों के द्वारा इस्लाम पर हमला करने की है। यह नई पॉलिसी शीतयुद्ध से भी ज़्यादा ख़तरनाक और हानिकारक है। कुछ साल पहले (अगस्त/2015 ई0) "यूएस न्यूज़ एंड वर्ल्ड रिपोर्ट" मैंग्ज़ीन ने "फ़िक्र व ज़हन और डॉलर" के शीर्षक के तहत लिखा था कि अमरीकी प्रशासन इस्लाम दुनिया पर प्रभावपूर्ण होने के लिये करोड़ों डॉलर ख़र्च कर रहा है तथा उन प्रचार–प्रसार के उन माध्यमों, शोध संस्थाओं तथा रिसर्च सेन्टरों को पूंजी उपलब्ध करा रही है जो इस्लाम और मुसलमानों की छवि बिगाड़ करके पेश करते हैं। इस नई जंग का नाम "जनरल डिप्लोमैसी" रखा गया है। अतः साहित्यकारों व शिल्पकारों के द्वारा रसूलुल्लाह (स0अ0) की शान में गुस्ताख़ी तथा इस्लामी शायरों, इस्लामी पवित्रस्थलियों तथा मुसलमानों के अपमान का क्रम जारी है तथा ऐसे लोगों को राजनीतिक पनाह और आर्थिक सहायता उपलब्ध करायी जा रही है।

बाहरी हमले के साथ–साथ मुसलमान आन्तरिक रूप से भी ऐसे वक़्त में आपसी विरोधाभास व मतभेद का शिकार है। जबकि उन्हें एकमत होने व एक साथ रहने की आवश्यकता है। यह भी दुश्मनों की साज़िश का एक हिस्सा है कि मुसलमानों को आपस में लड़ाकर उनकी ताक़त कमज़ोर कर दी जाये तथा वे दुश्मनों की साज़िशों और मक्कारियों से ग़ाफिल व बेख़बर हैं। आज पाकिस्तान, बांग्लादेश, अफ़्ग़ानिस्तान, इराक़, यमन, मिस्र, सीरिया, लीबिया, त्यूनिस और दूसरे इस्लामी देशो में जो कुछ हो रहा है वह इसका सुबूत है। जहां मुसलमानों को मसलक के आधार पर आर्थिक, वर्गिक, पारिवारिक, राजनीतिक तथा वैचारिक बुनियाद पर कशमकश में उलझाया जा रहा है। विभिन्न गिरोहों में आपसी लड़ाईयां करवायी जा रहा हैं। आत्मघाती हमले कराये जा रहे हैं। जिनमें मुसलमानों ही का जानी व माली नुक़सान होता है। ग़ैर मुस्लिम बहुसंख्यक देशों में मुसलमानों पर तरह–तरह का दबाव डाला जा रहा है। इसकी ताज़ा मिसाल म्यांमार यानि बर्मा है। जहां चरमपंथी बुद्धिस्टों ने निहत्थे रोहन्गियाई मुसलमानों का क़त्लेआम किया लेकिन मानवाधिकार की अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएं ख़ामोश तमाशाई बनी रही। शुरू में सयुंक्त राष्ट्र संघ भी ख़ामोश रहा। तुर्की तथा दो–तीन इस्लामी देशों के अलावा अबर दुनिया तमाशाई बनी रही।

मीडिया तथा पाठ्य पुस्तकों के द्वारा मुसलमानों के दिलों को दुखाया जा रही है। देशद्रोही तथा राष्ट्रविरोधी कहा जा रहा है और उन पर आतंकवाद, देश से दुश्मनी और रूढ़िवादिता का आरोप लगाया जाता है। दूसरी ओर साम्राज्य विभिन्न देशों में विभिन्न प्रकार से अपना असर व

रसूख़ बढ़ाने की कोशिश कर रहा है।

आर्थिक क्षेत्र में मुस्लिम देशों के पूंजीपतियों की दौलत ग़ैर मुल्की ताक़तों के हाथों में है इसलिए कि अन्तर्राष्ट्रीय बैंकों, फ़न्डिंग करने वाली संस्थाओं और सरमायाकारी के मरकज़ों पर उन्हीं ताक़तों का क़ब्ज़ा है। अतः लोग मेहनत और ख़ून पसीने की कमाई हुई अपनी ही दौलत को अपनी मर्ज़ी से ख़र्च नहीं कर सकते। विदेशी ताक़ते ख़र्च तय करती हैं। यहां तक कि ज़कात और सदक़ा व ख़ैरात में भी इन्हीं ताक़तों के आदेशों के पाबन्द हैं।

मुसलमान जिन ख़तरों का सामना कर रहे हैं, उनमें वह वैचारिक व सांस्कृतिक आक्रमण भी है जो वर्तमान में सुधार तथा स्वतन्त्र राय तथा विचार रखने वाले मुस्लिम चिन्तक, शोधकर्ता और तथाकथित बुद्धिजीवी कर रहे हैं। अतीत में यह वैचारिक व सांस्कृतिक हमला यूरोपीय चिन्तक व फन्डामेन्टलिस्ट कर रहे थे जिनका प्रभावक्षेत्र मालूम व सीमित था। वर्तमान वैचारिक व सांस्कृतिक हमले उससे अधिक ख़तरनाक हैं। स्वतन्त्र राय तथा विचार रखने वाले चिन्तक भोले–भाले, सीधे–साधे और सादा मुसलमानों को धोखे में डालते हैं तथा उनके दिलों में इस्लामी शिक्षाओं तथा आदेशों के संबंध में शंका पैदा कर देते हैं। दीनी वास्तविकताएं को नष्ट कर रहे हैं। दीनी आदेशों तथा शिक्षा में बदलाव कर रहे हैं। रोशन इस्लामी इतिहास को बदनुमा बनाकर प्रस्तुत कर रहे हैं। उनका लिट्रेचर अरबी, फ़ारसी, उर्दू तथा मुसलमानों में प्रचलित विभिन्न भाषाओं में प्रकाशित हो रहा है तथा बाहरी ताक़ते और मुस्लिम हुकूमतें उनकी सरपरस्ती कर रही हैं और इस तरह वह मुस्लिम हल्क़ों में आम किया जा रहा है। उन्हें इस्लाम विरोधी ताक़ते हर तरह का सहयोग दे रही हैं। और अब इन्टरनेट, अख़बारों व पत्रिकाओं तथा प्रचार व प्रसार के नये साधनों ने उसको और आसान कर दिया।

कहीं सैन्य युद्ध का सामना है, तो कहीं वैचारिक तथा ज्ञान की जंग का। कहीं सभ्यता तथा संस्कृति के नाम पर हमलों का सामना है, तो कहीं आर्थिक संकट का। कहीं बाहरी ख़तरों का सामना है तो कहीं अन्दरूनी चैलेंजों का। दूसरी तरफ़ जो लोग उन ख़तरों का मुक़ाबला कर सकते हैं वह या तो क़ैद हैं या हक़ीक़त और सही सूरतेहाल से परिचित न होने के कारण ख़ामोश हैं। एकांतवास करते हैं या वह पुराने ऐतिहासिक मसलों में उलझे हुए हैं, जिनकी वजह से उनको नये–नये चैलेंजों और ख़तरों पर और उन मसलों पर ध्यान देने का मौक़ा ही नहीं मिलता, जिन पर मुस्लिम समुदाय के वजूद का दारोमदार है।

पूरी दुनिया में ख़ास तौर से इस्लामी मुल्कों में ईसाई मिशनरी के विभिन्न शैक्षिक, सांस्कृतिक तथा रिफ़ाही संस्थाओं तथा नेटवर्क काम कर रहे हैं। ईसाई मिशनरियों की सरगिर्मियां उन मुल्कों में शबाब पर हैं, जो जंगों से निढ़ाल हो चुके हैं या आपसी कशमकश, आर्थिक संकटों से दो–चार हैं, बहुत से मुमालिक ऐसे हैं जहां चर्च का वजूद नहीं था, अब वहां ईसाई इबादतगाहें और चर्च स्थापित हो चुके हैं। मिसाल के तौर, खाड़ी देशों, संयुक्त अरब अमीरात, इराक़, अफ़ग़ानिस्तान इत्यादि वे देश हैं जहां पहले चर्च का वजूद नहीं था, लेकिन अब जगह–जगह चर्च नज़र आने लगे हैं और मुसलमान देशों में ईसाई आबादी का प्रतिशत बढ़ाने के लिये योजनाबद्ध प्रयास हो रहा है। अन्तर्राष्ट्री ताक़ते देशों में ग़ैर मुस्लिम अल्पसंख्यकों को विद्रोह तथा अलगाव पर उकसा रही हैं। ईसाई मिशनरियों को यूरोपीय देशों का भरपूर सहयोग तथा संरक्षण प्राप्त है। ईसाई मिशनरियों की कार्यवाहियां भी एक बड़ा ख़तरा हैं। इसका मुक़ाबला सिर्फ़ दावते इस्लामी की कोशिशों से किया जा सकता है। इसके लिये धार्मिक रूप से जागरुक करने की आवश्यकता है तथा नवीन साधनों को अपनाते हुए शिक्षा व प्रशिक्षण तथा धार्मिक प्रचार व सुधार के कामों को बेहतर तथा प्रभावपूर्ण बनाना आवश्यक है।

इतिहास में कई बार मुस्लिम क्षेत्रों पर क़ब्ज़ा किया गया और फिर कुछ समय के बाद यह आज़ाद हो गये। इसी तरह इस्लामी इतिहास में क़त्ल व लूटपाट तथा विधवंस की घटनाएं भी हुईं तथा मुसलमानों को ज़ालिम व अत्याचारी ताक़तों के जुल्म का शिकार होना पड़ा। लेकिन मौजूदा सूरतेहाल इससे अलग है। आज इस्लाम से नफ़रत पूरी दुनिया में बीमारी की तरह फैल गयी है कि इस्लाम और मुसलमानों को हर मौक़े पर मुजरिम समझा जा रहा है। उनको आतंकवादी, चरमपंथी, शांति का दुश्मन कहा जा रहा है। दुनिया के किसी भी हिस्से में होने वाली आतंकवादी घटना को आसानी के साथ मुसलमानों से जोड़ दिया जाता है। बेगुनाहों को गिरफ़्तार किया जाता है और उन्हें न किये गये जुर्म की सज़ा दी जाती है। मीडिया के ज़रिये ऐसी स्थिति पैदा कर दी गयी है कि हर जगह मुसलमान संदिग्ध समझा जाता है। लोग उससे ख़ौफ़ व

डर महसूस करते हैं।

मुसलमानों के बारे में यह पक्षपातपूर्ण तथा नकारात्मक विचार मीडिया की देन है। जिसने यह प्रोपगन्डा कर रखा है कि "सिर्फ़ और सिर्फ इस्लाम ही आतंकवाद का उद्गम स्त्रोत हैं।" यह मौजूदा परिस्थिति जंग से ज़्यादा ख़तरनाक है।

वर्तमान परिस्थितियों का सामना तथा सुधार के लिये गंभीर, सकारात्मक तथा ठोस क़दम उठाने की आवश्यकता है। बीते कुछ सालों में कुछ गिरोहों की ओर से बदगुमानी, ग़लतफ़हमी, ख़ौफ़ व दहशत और शक व शुब्हा के माहौल को ख़त्म करने के लिये सर्वधर्म चर्चा का दौर शुरू किया गया है। इस मुहिम का मक़सद, मुसलामनों के बारे में जो नकारात्मक राय क़ायम की जा रही है, उसको दूर करने किया जाये। यह एक सकारात्मक प्रयास है। लेकिन अन्तर्राष्ट्रीय ताक़तें पक्षपातपूर्ण कार्यवाहियां कर रही हैं। बल्कि मौजूदा सुपर पॉवर की सभी कार्यवाहियों का निशाना इस्लाम और मुसलमान हैं। जबकि दुनिया के विभिन्न क्षेत्रों में जो आतंकवादी तथा कट्टरपंथी संस्थाएं फैली हुई हैं उनसे सुपर पॉवर न सिर्फ़ यह कि नज़रे फेरता है, बल्कि उनका संरक्षण करता है। इसी तरह अन्तर्राष्ट्रीय मीडिया तथा प्रचार–प्रसार के साधन मुसलमानों के ख़िलाफ़ नफ़रत पैदा करने वाला लिट्रेचर प्रकाशित कर रहे हैं और मुस्लिम दुश्मनी पर आधारित किताबें तथा लेख प्रकाशित किये जा रहे हैं। अगर यह पक्षपातपूर्ण रवैया तर्क नहीं किया गया और उसको रोकने की कोशिशें नहीं की गयीं तो इस ओर सकारात्मक दिखाई देने वाला उठाया गया कोई क़दम एक निरर्थक प्रयास साबित होगा।

ज़रूरत इस बात की है कि विभिन्न सभ्यताओं तथा धर्मों के मानने वालों के बीच आपसी विश्वास पैदा करने के लिये कोशिशें की जाये। इस क्रम में साहित्यकारों, विचारकों, बुद्धिजीवियों तथा पत्रकारों तथा मीडिया से जुड़े हुए लोग अच्छा रोल अदा कर सकते हैं। इसके लिये सकारात्मक तथा निर्माणी और न्यायपूर्ण मानसिकता की पक्षधर मीडिया की आवश्यकता है। इस बारे में मुसलमानों की ज़िम्मेदारी और ज़्यादा बढ़ जाती है क्योंकि वे मुजरिम समझे जा रहे हैं। चुनान्चे मुसलमानों को चाहिये कि वे ज्ञान व शिल्प के द्वारा, मीडिया के द्वारा तथा व्यापक विचार–विमर्श, सकारात्मक परिचर्चा तथा व्यक्तिगत मुलाक़ातों के द्वारा भ्रान्तियों को दूर करें तथा इस्लामी शिक्षाओं की सही तस्वीर प्रस्तुत करें। इसी के साथ विरोधी तथा पक्षपातपूर्ण कार्यवाहियों पर प्रतिक्रिया देने से बचें तथा भड़काऊ भाषा का जवाब भड़काऊ भाषा से न दें। क्योंकि यह तरीक़ा हालात को और अधिक ख़राब कर देगा। उनको इस्लाम की सही तस्वीर पेश करने और ग़लतफ़हमियों को दूर करने के लिये शैक्षिक, शिल्पीय, सांस्कृतिक तथा सामूहिक प्रयास करने चाहियें तथा विरोधियों तक पहुंच तथा सुलह के लिये अवसर तलाशने चाहियें।

मौजूदा सूरतेहाल में इस बात की ज़रूरत है कि मुसलमान होश से, बुद्धि से और सही समझ का सुबूत देते हुए हालात का जायज़ा लें और साज़िशों और ख़तरों से बाख़बर रहें और चैलेंजों और ख़तरों का मुक़ाबला करने के लिये कार्यप्रणाली पर आधारित उचित तथा सही रणनीति अपनाएं साहित्यिक, वैचारिक, सांस्कृतिक व व्यंग्य के प्रोग्रामों के द्वारा जो हमले हो रहे हैं उन ही साधनों से उनका मुक़ाबला किया जाये। क्योंकि रक्षा की रणनीति यही है कि वह हथियार अपनाये जायें जो दुश्मन अपनाता हो। अल्लाह तआला का फ़रमान है:

"और उनसे मुक़ाबला करने के लिये जिस क़दर भी तुमसे हो सके सामान दुरुस्त रखो, क़ूव्वत से और पले हुए घोड़ों से जिनके ज़रिये तुम अपना रोब रखते हो, अल्लाह के दुश्मनों और अपने दुश्मनों पर, और उनके अलावा दूसरों पर भी, कि तुम उन्हें नहीं जानते, अल्लाह उन्हें जानता है, और जो कुछ भी तुम अल्लाह की राह में ख़र्च करोगे, वह तुम्हें पूरा–पूरा देगा, और तुम्हारे लिये ज़रा भी कमी न होगी, और वह अगर सुलह की तरफ़ झुकें तो आप भी उसकी तरफ़ झुक जाएं, और फिर अल्लाह पर भरोसा रखिये, बेशक वह ख़ूब सुनने वाला है, ख़ूब जानने वाला है।" (सूरह अन्फ़ाल: 60)

उपरोक्त आयतों की रोशनी में आवश्यक है कि उन साधनों, उस रणनीति से परिचित रहा जाये जो दुश्मन अपनाता है। मुसलमानों की नाकामी की बड़ी वजह यही है कि मौजूदा दौर के ख़तरों और चैलेंजों के लिये ऐसे साधन अपनाते हैं जिनका ज़माना ख़त्म हो चुका है और जो आउट ऑफ़ डेट हो चुके हैं। जब मुसलमान नये चैलेंजो व ख़तरों के स्वरूप से परिचित हो जायेंगे और उसके लिये सही और मुनासिब साधनों को अपनाएंगे तो वे सफल होंगे और तमाम ख़तरों व चैलेंजों का मुक़ाबला कर सकेंगे।

उम्मत-ए-मुस्लिमा का स्थान और उसकी माँग

मौलाना अब्दुल्लाह हसनी नदवी रह०

आज सारे आलम में मुसलमानों की तादाद बहुत ज़्यादा है। लेकिन यह भी एक हक़ीक़त है कि अदद गरचे मुसलमानों की ज़्यादा है मगर वे बेक़ीमत और बेवज़न हैं। रिवायत में ऐसी सूरतेहाल के मुताल्लिक़ पेशीनगोई मौजूद है कि एक ऐसा दौर आयेगा जिसमें इस उम्मत की हैसितय समन्दर के झाग की तरह हो जायेगी। इसी तरह एक दूसरी रिवायत में आता है कि इस उम्मत पर दुनिया की तमाम क़ौमें ऐसे ही टूट पड़ेंगी जिस तरह दस्तरख़्वान पर भूखे टूटते हैं। अगर ग़ौर किया जाये तो आज उन दोनों हालतों से उम्मते मुस्लिमा दोचार है। गरचे यह बात सराहतन नहीं कही जा सकती है कि उम्मते मुस्लिमा का वज़न हल्का हो गया है, लेकिन यह कहने में कोई तरद्दुद नहीं हो सकता कि इस उम्मत का वज़न बहुत तेज़ रफ़्तारी से हल्का हो रहा है। अफ़रादे उम्मत अपनी क़ीमत खोते जा रहे हैं, लिहाज़ा मौजूदा हालात में उम्मते मुस्लिमा के लिये लम्हा-ए-फ़िक्रिया यह है कि अल्लाह तआला ने हमें बावज़न बनाया था और हम बेवज़न होते जा रहे हैं। बावज़न होने का अस्ल जौहर यह है कि इन्सान अल्लाह तआला का ग़ुलाम रहे। और यह तसव्वुर ज़हन में क़ामय हो कि कायनात की हर चीज़ उसके नफ़े के लिये है। और वह उन चीज़ों का ताबए नहीं है, बल्कि वह चीज़ें उसके ताबेअ हैं।

उम्मते मुस्लिमा के बावज़न होने का यही राज़ है कि इन्सान अपनी मख़दूमियत, और मताइयत को बाक़ी रखते हुए ज़िन्दगी गुज़ारे, ख़ुदा तआला के गुन गाये और जामे तौहीद से सरशार रहे। लेकिन आज मुसलमानों का हाल यह हो गया है जिसका नक़्शा ख़ुद आयते कुरानी में खींचा गया है कि लोग ईमान के बावजूद शिर्क में मुब्तिला हो जाते हैं, अगर आज जायेज़ा लिया जाए तो पता चलेगा कि अक्सर मुसलमानों के अक़ाएद दांव पर लगे हुए हैं। हत्ता कि बड़े-बड़े उलमा का अक़ीदा दुरुस्त नहीं है।

अक़ीदे का ताल्लुक़ दिल व दिमाग़ से है। सिर्फ़ ज़बान से ताल्लुक़ होना काफ़ी नहीं है। अक़ीदे का ख़ास्सा यह है कि जब दिल व दिमाग़ में आता है तो इन्क़िलाब बरपा कर देता है। इसकी बदौलत इन्सान की फ़िक्र तब्दील हो जाती है। दिल के जज़्बात बदल जाते हैं। और उसके नतीजे में आमाल भी बदल जाते हैं। और हौसला इतना बुलन्द हो जाता है कि बड़ी-बड़ी ताक़ते उसके सामने दम नहीं मार सकतीं। और किसी की मजाल नहीं हो सकती जो उसके सामने खड़ा हो जाये।

नबी करीम (स0अ0) ने उम्मते मुस्लिमा के मेयार की बुलन्दी और बावज़न रहने के बारे में फ़रमाया है कि अगर तुम किताबुल्लाह और अल्लाह के रसूल (स0अ0) की सुन्नत को मज़बूती से पकड़ लो तो उसी में तुम्हारी नजात और फ़लाह है। किताबुल्लाह वह है जिसकी बक़ा व खुलूद का मज़दह अल्लाह के दरबार से हासिल है, उसको कोई नहीं मिटा सकता। अल्लाह तआला का इरशाद है: "हम ही ने इस नसीहत (नामा) को उतारा है और यक़ीनन हम ही उसकी हिफ़ाज़त करने वाले हैं।" (सूरह हिज्रः 9)

ज़ाहिर है उस किताब को कौन मिटा सकता है जो ऊपर से बक़ा व खुलूद की सनद लायी है और रसूलुल्लाह (स0अ0) की ज़िन्दगी उसी किताब की तफ़सीर से इबारत है।

कुरआन व सुन्नत से गहरे ताल्लुक़ के साथ बावज़न होने का तीसरा नुस्ख़ा यह है कि अहले ईमान में दाइयाना मिज़ाज पैदा हो, अगर इन्सान में दावत का जज़्बा है तो वह अपनी नाफ़ईयत को मुआशरे में उजागर कर सकता है। कुरआन मजीद में इस पहलू पर भी ख़ास तवज्जो दी गयी है, लेकिन इस सिलसिले में ज़रूरी है कि इन्सान हकीमाना तर्ज़ भी अख़्तियार करे, अगर जो भी बात हक़ समझी और उसको बयान कर दिया तो कभी-कभी यह चीज़ भी मुज़िर बन सकती है। लेकिन मौजूदा दौर का अलमिया यह है कि या तो दावत का मिज़ाज नहीं है और अगर कुछ अनासिर मौजूद भी हैं तो वह मौक़ा शिनासी से वाक़िफ़ नहीं। जिसकी बुनियाद पर बहुत सख़्त नताएज भी देखने में आते हैं। ज़रूरत इस बात कि है कि इस दौर में किताब व सुन्नत और दावत के तरीक़े को मज़बूती से थामा जाये और अपने वज़न को साबित किया जाये।

क्रमवार:

एकेश्वरवाद क्या है?

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

नुजूम परस्ती की नफ़ी:

हज़रत ज़ैद बिन ख़ालिद जहनी रज़ि0 से रिवायत है फ़रमाया: एक रात हुदैबिया में तमाम रात पानी बरसा, सुबह को हुज़ूर (स0अ0) ने नमाज़ पढ़ाई, जब नमाज़ से फ़ारिग़ हुए तो आप (स0अ0) ने हम सब की तरफ़ मुतवज्जे होकर फ़रमाया: तुम जानते हो कि तुम्हारे रब ने क्या फ़रमाया: लोगों ने फ़रमाया: अल्लाह और उसके रसूल ख़ूब जानते हैं, हुज़ूर स0अ0 ने फ़रमाया: अल्लाह ने फ़रमाया कि आज सुबह के वक़्त मेरे बाज़ बन्दे मेरी कुदरत के क़ायल हुए और बाज़ मुनकिर, जिन्होंने कहा: यह बारिश अल्लाह के फ़ज़ल और उसकी रहमत से हुई, तो यह मेरे मोमिन बन्दे हैं। सितारों के मुनकिर हैं। जिन्होंने कहा कि पंचथर के सबब से हुई तो वह मेरे मुनकिर हैं और सितारों के मुतक़िद हैं।

इस हदीस में आप (स0अ0) ने ज़माने जाहिलियत के एक अक़ीदा की नफ़ी फ़रमायी है। मक़ामे हुदैबिया में सुबह की नमाज़ का वक़्त था और रात को बारिश हुई थी, उसके बाद यह क़िस्सा हुआ कि आप (स0अ0) जब नमाज़ से फ़ारिग हुए तो लोगों की तरफ़ मुतवज्जे होकर फ़रमाया कि क्या तुम जानते हो, तुम्हारे रब ने क्या कहा: सहाबा ने अर्ज़ किया: अल्लाह और रसूल ज़्यादा जानते हैं। यहां पर आप (स0अ0) ने एक अहम बात बताने से पहले सवाल का अंदाज़ अख़्तियार फ़रमाया है, जबकि बात पहुंचाने का एक तरीक़ा यह था कि सीधे–सीधे बात को बता देते, लेकिन एक मुअस्सिर तरीक़ा यह भी है कि पहले सवाल करके ज़हन में तजस्सुस व तलब पैदा की जाये, और इसके कुबलू करने की बेहतर से बेहतर तरीक़े पर सलाहियत पैदा की जाये और उसके बाद बात बतायी जाये। आप स0अ0 का यही तरीक़ा था। मज़कूरा हदीस में भी आप स0अ0 ने यही तरीक़ा अख़्तियार फ़रमाया है और सहाबा के पूरी तरह मुतवज्जे होने के बाद फ़रमाया कि अल्लाह तआला फ़रमाता है कि कुछ मेरे बन्दे मुझ पर ईमान रखने वाले हैं और कुछ काफ़िर हैं। लिहाज़ा जो बन्दे यह कहते हैं कि अल्लाह के फ़ज़्ल से बारिश हुई है तो वह मुझे मानने वाले हैं और सितारों व कवाकिब पर ईमान नहीं रखते हैं। गोया उनका इनकार करते हैं और जो बन्दे यह कहते हैं कि फलां–फ़लां नछत्र की वजह से और फ़लां सितारे के फ़लां मदार में पहुंचने की वजह से बारिश हुई है, गोया सितारों को मानते हैं और हमें नहीं मानते।

तरीक़ा–ए–तब्लीग़:

आप (स0अ0) के बात पहुंचाने का जो तरीक़ा रहा है, इसलिए आप (स0अ0) ने बड़ी हिकमतें अख़्तियार फ़रमायी हैं, बात पहुंचाने का एक तरीक़ा यह हो सकता था कि किसी मुनासिबत से और किसी मौक़ा पर आप यह कह देते कि ऐसा काम नहीं करना चाहिये, लेकिन बजाय इसके आप (स0अ0) ने एक मर्तबा सुलह हुदैबिया में जबकि बारिश हुई और उसके बाद बारिश खुल गयी। इस वक़्त आप (स0अ0) ने सबको मुख़ातिब करके यह बात इरशाद फ़रमायी कि ऐसे बहुत से लोग हैं जो सितारों पर ईमान रखते हैं, और यह कहते हैं फ़लां–फ़लां नछत्र की वजह से हमें बारिश मिली और जब यह फ़लां सितारे फ़लां जगह पहुंचे तब बारिश हुई। गोया वह लोग बजाय अल्लाह के सितारों की तरफ़ बारिश की निस्बत करते थे, इसीलिए आप (स0अ0) ने इरशाद फ़रमाया कि बहुत से अल्लाह के बन्दे ऐसे हैं जिनका मेरे ऊपर ईमान हैं। आप स0अ0 ने यह बात इसलिए फ़रमायी कि जो लोग सितारों पर यक़ीन रखते हैं और समझते हैं कि सितारों से काम होगा वह गोया अल्लाह के मुनकर हैं और अल्लाह की कुदरत पर यक़ीन नहीं रखते हैं, और जो लोग यह समझते हैं कि बारिश अल्लाह के हाथ में हैं, उसी के हुक्म से बारिश होती है और सितारों को कोई दख़ल नहीं है तो वह लोग अल्लाह पर ईमान रखते हैं और गोया सितारों पर ईमान रखते हैं।

अरबों का रिवाज:

अरबों में यह रिवाज था कि वह नछत्र की बुनियाद पर

अपने फ़ैसले करते थे, और उनको देखकर ही वह यह तय करते थे कि अब क्या होने वाला है, यानि अगर उनको कोई काम करना होता था तो वह पहले उन सितारों का मुशाहिदा करते थे ताकि वह यह तय कर सकें कि जो काम करना चाहते हैं वह काम हमारे लिये मुनासिब है या नहीं, गोया उनका यह अक़ीदा था कि यह सितारे एक तरह का तसर्रुफ़ रखते हैं, और जब यह सितारें फ़लां जगह पहुंचेगे तो गोया उन्हीं के ज़रिये यह काम होगा और अगर इससे मुख़ालिफ़ रास्ते पर आयेंगे तो यह काम नहीं होगा। यह एक ख़ास क़िस्म का उनका तसव्वुर था। ज़माना जाहिलियत में ऐसे बेशुमार जाहिली तसव्वुरात थे जिनको अल्लाह के रसूल (स0अ0) ने ख़त्म किया, इसी तरह यह भी एक जाहिली तसव्वुर था जिसके बारे में आप (स0अ0) ने बताया; यह भी एक मुश्रिकाना अक़ीदा है।

नुजूमियों की बड़

ज़माना जाहिलियत में इस अक़ीदा के फ़रोग़ का एक बड़ा सबब इल्मे नुजूम से हद दर्जा दिलचस्पी थी। इसीलिए इसको यूं कहा जा सकता है कि यह सब ख़ुराफ़ात इस ज़माने के नुजूमियों की बड़ थी। वह लोग सितारों की बात अलामात देकर पेशीनगोइयां करते थे। ज़माना–ए–जाहिलियत में इसका बहुत रिवाज था। बहुत से लोग उनके पास जाते थे और जाकर पूंछते थे कि हमारे घर में फ़लां महीना और फ़लां तारीख़ में शादी मुनासिब है या नहीं। या हम फ़लां काम करने जा रहे हैं वह हमारे लिये मुनासिब है या नही। फ़िर वह उस शख़्स की कुन्डली देखते थे और उल्टी–सीधी पेशीनगोइयां करते थे। जैसा कि हमारे मुल्क में बिरादराने वतन के यहां निज़ाम रायज हैं, जो कि वही पुराना जाहिली रिवाज है। आज भी हिन्दुओं में यह बात आम हैं कि वह अपनी शादियां करने से पहले अपने पण्डितों से पूछते हैं कि शादी के लिये कौन सी तारीख मुनासिब है। चुनान्चे उनके पण्डित उनकी कुन्डलियां देखकर और दुनिया भर का हिसाब लगाकर बताते हैं कि तुम्हारे लिये शादी की फ़लां तारीख़ मुनासबि है या नहीं। ज़ाहिर है यह सब लग़्वियात हैं और अल्लाह माफ़ करे बसा अवक़ात मुसलमानों के अन्दर भी यह बातें पैदा हो जाती हैं और वह भी उन्हीं बुनियादों पर काम करते हैं और अल्लाह की ज़ात पर यक़ीन नहीं रखते हैं। जबकि यह एक मुश्रिकाना अक़ीदा है। इसीलिए हर साहिबे ईमान का यक़ीन अल्लाह की ज़ात पर होना चाहिये। तौहीद इसी का नाम है कि दुनिया में जो कुछ हो रहा है आदमी यक़ीन रखे कि अल्लाह के करने से हो रहा है। और इस सिलसिले में किसी सबब को देखकर मुतास्सिर न हो कि इस सबब की वजह से यह काम हो रहा है। बल्कि यह ज़हन में रखे कि अल्लाह ही ने असबाब पैदा फ़रमाये हैं। और असबाब का हाल यह है कि एक सबब अभी हमको नज़र आ रहा होता है और हम समझते हैं कि इस सबब की बुनियाद पर फ़लां मुसबबुब हमारे सामने आ जायेगा। लेकिन कुछ अर्से के बाद वह सबब ही ग़ायब हो जाता है। मालूम हुआ कि असबाब की कोई हक़ीक़त नहीं है। असबाब बदलते रहते हैं, अल्लाह का यही निज़ाम है।

बदअक़्ली की इन्तिहा

आज के इस इल्मी, तरक़्क़ी याफ़्ता दौर में भी कितने लोग ऐसे हैं जो हाथ की लकीरें दिखातें है और अपना मुस्तक़बिल मालूम करते हैं कि हमको दौलत मिलेगी या नहीं मिलेगी। मुस्तक़बिल में हमारे साथ क्या हेागा। और यह नहीं जानते कि हाथ की लकीरें रोज़ बदलती हैं। आज हाथ की लकीरें कुछ हैं और कल कुछ हो जायेंगी। वाक़्या यह है जो आदमी इन चीज़ों के चक्कर में पड़ता है वह यह नहीं समझता कि यह चीज़ें बिल्कुल रेत की लकीरें है, जैसे रेत के ऊपर जो लकीरें बनायी जाती हैं वह दिन में होती हैं और शाम को ख़त्म हो जाती हैं और वहां पर एक नया डिज़ाइन बन जाता है। ऐसे ही हाथ और पेशानी की लकीरों का हाल है। उनमें इन्सान को हर रोज़ एक नया डिज़ाइन नज़र आयेगा। अक़्लमन्दी तो यह है कि इस बात पर यक़ीन रहे कि अल्लाह ने हमारा मुस्तक़बिल तय किया है और उसको अल्लाह ही जानता है और उसके अलावा कोई नहीं जानता।

परेशानियों का सबब

यह देखा गया है कि जो लोग इन मौहूम बातों में पड़ते हैं उनकी ज़िन्दगी अजीरन हो जाती है। वह मुसीबत में पड़ जाते हैं और सिर्फ़ एक–एक चीज़ में ग़ौर ही करते हैं कि यह उल्टा हो रहा है या सीधा। इसलिए अल्लाह की ज़ात पर यक़ीन होना चाहिये और यह अक़ीदा हो ना चाहिये कि अल्लाह तबारक व तआला ने यह सारी चीज़ें रखीं है और अल्लाह ही ज़्यादा जानता है कि कौन सी चीज़ मुअस्सिर है और कौन सी चीज़ मुअस्सिर नहीं है। याद रहे कि अगर कोई इन चीज़ों के पीछे पड़ता है और

उनको मुअस्सिर समझता है तो गोया वह अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की ज़ात का एक तरह से इनकार कर रहा है और इन चीज़ों पर यह समझकर ईमान ला रहाहै कि उनसे हमारा काम बन रहा है। ज़ाहिर है कि यह एक तरह का शिर्क है इसलिए इन तमाम बातों से दूर रहने की ज़रूरत है और सिर्फ़ अल्लाह तआला की ज़ात पर यक़ीन रखने की ज़रूरत है।

इल्मे नुजूम

इल्मे नुजूम एक मुस्तक़िल फ़न है। और वह फ़न यह है कि उसके माहिर लोग सितारों को देखकर सिमते मुतअययन करते हैं और रास्ते तय करते हैं। कुरआन मजीद में एक जगह इरशाद हैः "और सितारों से लोग रास्ते पाते हैं।"

सितारों से रास्ता पाने का मतलब यह नहीं कि सितारों को देखकर यह मालूम हो जायेगा कि कब बारिश होगी और कब नहीं होगी। कब फ़ला काम होगा और कब नहीं होगा। बल्कि इसका मतलब है कि सितारों को देखकर लोग रास्ते तय करते हैं, इसलिए कि अल्लाह ने उन सितारों को ऐसा रखा है कि उनसे सिमते तय होती हैं उनको देखकर आदमी सेहरा और समन्दर में सफ़र करता है। अगरचे इस ज़माने में बहुत सहूलियात हैं लेकिन क़दीम ज़माने में जब कुछ नहीं था, उस वक़्त सेहरा और समन्दर के सफ़र में रास्तों के तय करने का यही तन्हा तरीक़ा था कि लोग सितारों को देखते थे और यह समझ जाते कि हम किस रुख़ की तरफ़ जा रहे हैं और हम किस मुल्क का सफ़र करना चाहते हैं और उसके लिये हमें किस तरह चलना चाहिये। दर हक़ीक़त यही वह इल्म है जिसको इल्मे नुजूम कहते हैं। यह इल्म मतलूब है और मुफ़ीद भी। लेकिन नुजूमियों की जो पेशीनगोइयां होती हैं वह सब मुश्रिकाना बातें हैं और दीन व ईमान से इनका कोई ताल्लुक़ नहीं है, उनसे बहुत दूर रहने की ज़रूरत है, अलबत्ता अगर कोई आदमी सितारों को देखकर सिमतें मुतअय्यन करता है या अवक़ात को तय करता है तो दुरुस्त है।

सअद व नहस (अच्छे व बुरे) की बुनियाद

इन्सानी निज़ामे ज़िन्दगी में कई मौक़ो पर सितारों से मदद मिलती है, और यह अल्लाह तआला का एक ऐसा निज़ाम है, जैसे सूरज और चांद है, उनको देखकर महीने तय होते हैं, अय्याम तय होते हैं, हफ़्ते तय होते हैं, इसी तरह सितारों को देखकर औक़ात तय होते हैं, सिमतें तय होती हैं और रुख़ तय होते हैं, गोया यह एक मुस्तक़िल इल्म है, और इस सिलसिले में साइंस ने बड़ी तरक़्क़ियां की हैं, उन लोगों ने न जाने कहां–कहां किन–किन सितारों की खोज की है और इससे उनको फ़ायदे भी हासिल होते हैं, मालूम हुआ कि यह एक अलग इल्म है, जिसे सीखने में कोई हर्ज नहीं है, लेकिन उन सितारों को मुअस्सिर समझना और उनको गोया सबब क़रार देना और यह समझना कि फ़लां सितारा फ़लां जगह पहुंचेगा तो यह काम होगा, या फ़लां जगह जंग छिड़ जायेगी और फ़लां मुल्क का सितारा गर्दिश में है, लिहाज़ा वहां के हालात ख़राब हो जायेंगे, जैसा कि आजकल आम बोलचाल में यह भी जुम्ला बहुत बोला जाता है, जब किसी की हालत दुरुस्त न हो तो उसको कहा जाता है कि "तुम्हारी क़िस्मत का सितारा गर्दिश में है।"

ज़ाहिर है यह सब लग़्व बातें हैं, वाक़्या यह है कि सितारे अल्लाह के हैं, उसके बनाये हुए और पैदा किये हुए हैं, वह जहां चाहता है उनको पहुंचाता है, उनके मुतअय्यन रास्ते हैं, उनसे आदमी रास्ता पा सकता है और दुनिया में उनके ज़रिये सफ़र आसान कर सकता है, लेकिन उनको मुतसर्रिफ़ समझना और उनके बारे में यह तसव्वुर करना कि उनसे साद व नहस का ख़ास ताल्लुक़ है, और जब फ़लां सितारा फ़लां मंज़िल में पहुंचता है तो वह बड़ी मुबारक साइत होती है, अगर इस वक़्त शादी की जाये तो शादी बड़ी मुबारक होगी, और जब फ़लां सितारा फ़लां जगह पहुंचेगा तो वह बड़ी मनहूस साइत होती है, अगर इस वक़्त शादी की जायेगी तो शादी मनहूस रहेगी, यह सब लग़्व बाते हैं।

हक़ीक़त यह है कि न कोई वक़्त मनहूस है और न कोई वक़्त मसऊद है, सारे औक़ात अल्लाह के हैं और सअद व नहस का ताल्लुक़ आमाल से हैं लिहाज़ा जो इन्सान अच्छे आमाल कर रहा है वह अपने लिये सआदत का इन्तिज़ाम कर रहा है और जो बदआमालियां कर रहा है वह अपने लिये शक़ावत यानि नहस का इन्तिज़ाम कर रहा है। नहस बदआमालियों से होती है। हासिल बहस यह कि सितारों वग़ैरह को तसर्रुफ़ करने वाला समझना शिर्क का एक काम है, जिससे बहुत दूर रहना चाहिये, यह जाहिलियत के ज़माने का दस्तूर था, जिसकी ज़माना–ए–इस्लाम में आप (स0अ0) ने सराहत से नफ़ी फ़रमा दी।

फ़साद व सलाह की बुनियाद

अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

कुरआन मजीद की इस्तेलाह में अल्लाह तआला के वह तमाम एहकामात जो उसने अपने बन्दों को दिये हैं और बन्दों के ज़िम्मे उनका पूरा करना वाजिब है "अल्लाह के अहद" में शामिल हैं।

अल्लाह तआला अपने अम्बिया और अपनी किताबों के ज़रिये बन्दों पर जो ज़िम्मोदारी आयद की है वह हक़ीक़त में अल्लाह तबारक व तआला का बन्दों से किया हुआ अहद है, दुनिया का हर इन्सान जब बालिग़ होता है तो ख़ुद ब ख़ुद अल्लाह के अहद का पाबन्द हो जाता है। उसकी अव्वलीन ज़िम्मोदारी यह होती है कि अल्लाह तआला की अता की हुई सलाहियत को इस्तेमाल करके अल्लाह की वहदानियत तक पहुंच जाये। इस नतीजे तक पहुंचे बग़ैर न उसे यह कायनात मुतवाज़िन नज़र आयेगी, न अपनी ज़ात में कोई तवाज़ुन नज़र आयेगा। एक ग़ैर मुतवाज़िन बेहंगम क़िस्म की ज़िन्दगी उसे बसर करनी पड़ेगी। अल्लाह को एक मानने पर वह अल्लाह के अहद के बुनियादी मरहले को पार कर लेता है। इसके बाद एहकामात का सिलसिला अल्लाह की तरफ़ से जारी किया जाता है जिसको पूरा करना उसके ज़िम्मो लाज़िम हो जाता है। इसी का नाम ताअत है। इसी ताअत से निकल भागने वाले फ़ासिक़ कहलाते हैं। यही दर हक़ीक़त अल्लाह के अहद को तोड़ने वाले हैं। ऐसे लोग अगर दुनियावी एतबार से मामूली जाह व मंसब भी हासिल कर लें उसके बावजूद भी हक़ीक़ी ख़सारे में हैं, कुरआन मजीद में अल्लाह तआला के अहद को तोड़ने वालों का अंजाम बताते हुए फ़रमाने इलाही है: "जो अल्लाह से किये हुए अहद को पुख़्ता करने के बाद तोड़ देते हैं और अल्लाह ने जिस चीज़ को जोड़ने का हुक्म फ़रमाया है उसको तोड़ देते हैं और ज़मीन में फ़साद मचाते हैं तो वही लोग नुक़सान में हैं। (सूरह बक़रा: 27)

नक़्ज़ा के माने हैं किसी मज़बूत चीज़ को तोड़ना और पारह पारह करना। यह हिस्सी व मानवी दोनों चीज़ को तोड़ने के लिये इस्तेमाल होता है: (मैंने इमारत तोड़ दी) किसी भी इमारत के मलबे को अनक़ाज़ कहते हैं, दूसरी तरफ़ अहद व पैमान तोड़ने के लिये यह लफ़्ज़ भी इस्तेमाल होता है।

"मन बादा मीसाक़ह" यानि अहद की पूरी मज़बूती और इस्तहकाम के बाद, उससे यह बताना मक़सूद है कि अल्लाह का अहद कोई ढ़ीला–ढ़ाला काम चलाऊ अहद नहीं है, जिसे जब चाहा बनाया और जब चाहा तोड़ दिया। यह एक इन्तिहाई मज़बूत बंधन है जिसपर मज़बूती से कारबन्द रहना लाज़िम है।

दूसरे यह कि अल्लाह कभी भी ढ़ीला–ढ़ाला अहद नहीं लेता, वह कोताहियों को माफ़ ज़रूर करता है, लेकिन उसका लिया हुआ अहद पुख़्ता ही होता है, उसे नज़रअंदाज़ करना मुमकिन नहीं।

अहद में कमज़ोरी तीन तरह से पैदा होती है:

1. अहद लेने वाला ख़ुद कमज़ोर हो।
2. अहद लेने वाले की निगाह में अहद की कोई अहमियत न हो।
3. जिससे अहद लिया जा रहा हो वह ख़ुद अहद को समझ न पा रहा हो, उसे अहद का यक़ीन ही न हो।

मज़कूरा आयत में "मन बादा मीसाक़ह" कहकर अल्लाह ने यह बता दिया कि अहद पुख़्ता हो चुका है। लिहाज़ा यह अहद निहायत क़ाबिले क़द्र है, अहद लेने वाला अल्लाह है और उसने इस कायनात को अपनी निशानियों से इस तरह आबाद कर रखा है कि ज़र्रे से लेकर आफ़ताब तक सब उसके गुन गाते हैं और उसकी वहदानियत की गवाही देते हैं। अम्बिया व किताबों के ज़रिये उसने अपनी निशानियां इतनी वाज़ेह कर दी हैं कि अब किसी के लिये इनकार की गुंजाइश नहीं। रसूल और उनकी तालीमात के बाद अब किसी के पास कोई हुज्जत नहीं।

लिहाज़ा ''मन बादा मीसाक़ह'' अल्लाह के अहद के लिये सिफ़त लाज़मी है। अल्लाह का कोई अहद नापुख़्ता हो ही नहीं सकता।

इस अहद को अल्लाह ने बाज़ मक़ामात पर वाज़ेह किया है, इरशाद हैः ''आदम क्या मैंने तुमसे इसका अहद नहीं लिया था कि शैतान की इबादत नहीं करोगे, वही तुम्हारा खुला हुआ दुश्मन है, बस सिर्फ़ मेरी इबादत करना, यही सीधा रास्ता है।''

''मीसाक़ह'' उस अहद को कहते हैं जिसे क़सम के ज़रिये और पुख़्ता किया जाये, यानि इन्तिहाई मज़बूत अहद, कुरआन करीम में इस मफहूम ''मीसाक़'' का इस्तेमाल बहुत सी जगहों पर हुआ है, जैसेः

"जब हमने नबियों से मज़बूत अहद लिया।"

इसी तरह "हमने उनसे इन्तिहाई मज़बूत निहायत पुख़्ता अहद लिया।"

इस लफ़्ज़ को मसदरी मफ़हूम यानि पुख़्तगी के माने में भी लिया जा सकता है, इस आयत में मीसाक़ इस माने में है, यानि वसूक़ और तौसीक़ के माने दे रहा है, जैसेः मीलाद "विलादत" के मफ़हूम में और मीयाद "वअद" के मफ़हूम में इस्तेमाल होता है। "मीसाक़ह" में ज़मीर अल्लाह की तरफ़ भी लौटाई जा सकती है, यानि वह अल्लाह की तरफ़ से अहद को निहायत पुख़्ता करने के बावजूद उसे तोड़ते हैं।

यहूद व नसारा के ताल्लुक़ से सूरह बक़रा में कुरआन करीम ने इस अहद का ज़िक्र किया है, इरशादे इलाही हैः

"तुम मेरे अहद को पूरा करो, मैं तुम्हारे अहद को पूरा करूंगा।"

मौजूदा तौरेत में भी इस अहद का तज़किरा मिलता है।

जब इन्सान अल्लाह ही के अहद को तोड़ेगा तो फिर अल्लाह तआला ने जिसे जोड़े रखने का हुक्म दिया है उसे काटने से भी नहीं हिचकिचायेगा, इसीलिए आयते बाला में फ़रमाया गयाः

"और अल्लाह ने जिस चीज़ को जोड़ने का हुक्म फ़रमाया है उसको वह तोड़ते हैं।"

इससे मुराद अहले ईमान के बाहमी ताल्लुक़ात, रिश्तेदारी और उससे बढ़कर इन्सान और उसके बनाने वाले माबैन ताल्लुक़ को काटना है।

रसूलुल्लाह (स0अ0) हक़ीक़त में बन्दों को अल्लाह और इन्सानों को इन्सानों से जोड़ने के लिये तश्रीफ़ लाये थे, ज़ाहिर बात है कि इन्सान को इन्सान से जोड़ने की इब्तिदा रिश्तों को जोड़ने ही से हो सकती है। इसलिए इन्सान का सबसे पहला वास्ता आम तौर पर अपने रिश्तेदारों ही से पड़ता है। इस अज़ीम मक़सद को पाने के लिये रसूलुल्लाह (स0अ0) ने अपनी मुबारक दावत की बुनियाद ही तौहीद और सिला रहमी पर रखी थी। तौहीद, अक़ाएद, आमाल और इबादात की जड़ है और सिलारहमी मुआशरत, अख़लाक़ और मेयार की अस्ल है। हज़रत अम्र बिन अब्सा रज़ि0 रसूलुल्लाह (स0अ0) की ख़िदमत में हाज़िर हुए, मक्की ज़िन्दगी का बिल्कुल इब्तिदाई ज़माना था, बस चार–पांच हज़रात ही इस्लाम में दाख़िल हुए थे, आपने रसूलुल्लाह (स0अ0) से कुछ अहम सवालात किये। पूछाः आप क्या हैं? आपने फ़रमायाः मैं नबी हूं। कहाः नबी क्या होता है? इरशाद फ़रमायाः नबी अल्लाह का रसूल होता है, यानि नबी अल्लाह की तरफ़ से भेजा हुआ पैग़म्बर होता है, उन्होंने पूछाः क्या वाक़ई अल्लाह ने आपको रसूल बनाकर भेजा है? आपने फ़रमायाः हां, फिर पूछाः अल्लाह ने आपको क्या पैग़ाम देकर भेजा है? आपने फ़रमायाः पैग़ाम यह देकर भेजा है कि अल्लाह को एक माना जाये, उसके साथ किसी को शरीक न किया जाये, बुतों को तोड़ा जाये और रिश्तों को जोड़ा जाये। यह मुबारक हदीस हक़ीक़त में इस आयत पर मुकम्मल रोशनी डालती है, और ''मा अमरलल्लाहु बिहि अंय्यूसिला'' से मुराद तौहीद का अक़ीदा और सिलारहमी है। उन दो बुनियादों को जमा करने ही से सही ''इन्सानियत'' वजूद में आती है।

लेकिन अगर यह दोनों बुनियादें मफ़कूद हो जायें तो फिर फ़साद बरपा होता है, जिसकी तरफ़ आयते बाला का इशारा मौजूद हैः

''और ज़मीन में फ़साद मचाते हैं।''

यह जुम्ला हक़ीक़त में ''यक़तूना मा अमरलल्लाहु बिहि अंय्यूसिला'' का नतीजा है। फ़साद हक़ीक़त में किसी के हक़ को पामाल करने के नतीजे में पैदा होता है, इस लिहाज़ से फ़साद की सबसे बड़ी बुनियाद शिर्क है, जिसके ज़रिये इस कायनात के पैदा करने वाले के हक़ को पामाल किया जाता है, और फ़साद की दूसरी बुनियाद क़तअ रहमी है, जिसके ज़रिये इन्सानों के

हुकूक पामाल किये जाते हैं, अल्लाह ने यह ज़मीन इन्सानों को बहुत ही साफ़–शफ्फ़ाफ़ दी थी, इन्सान ने इसे शिर्क से आलूदा किया और ज़मीन में बिगाड़ का सिलसिला शुरू किया, अल्लाह का इरशाद हैः "ज़मीन की इस्लाह हो जाने के बाद अब इसमें फ़साद न मचाओ, उम्मीद व ख़ौफ़ के साथ अल्लाह को पुकारो।"

हक़ीक़त में अल्लाह की बन्दगी का ऐलान ज़मीन की इस्लाह का सबसे बड़ा ज़रिया है, और दूसरा बड़ा ज़रिया सिला रहमी है, जिसके बारे में यह आयत रहनुमाई करती हैः "अगर तुम ज़िम्मेदार बन जाओ तो कहीं ऐसा तो नहीं होगा कि ज़मीन में फ़साद मचाना शुरू कर दो और अपने रिश्तों को पूरे वतन पर काट कर रख दो।"

फ़साद के यह दोनों ज़राए दर हक़ीक़त इन्सान को अल्लाह की रहमत से दूर फेंक देते हैं, इसलिए पहली आयत में फ़साद से बचने का हुक्म देते हुए अल्लाह तआला को पुकारने की ताकीद है, और ख़ुदापरस्तों के लिये यह ऐलान हैः "अल्लाह की रहमत ऐसे ही एहसान करने वालों के क़रीब होती है।"

इसी तरह दूसरी आयत में क़तअ रहमी करने वाले इन्सानियत कुश लोगों के लिये यह वईद हैः

"यह वह हैं जिनपर अल्लाह की लानत है, इसलिए अल्लाह ने इनको बहरा करके इनकी आंखों को अंधा कर दिया है।"

वाज़ेह रहे कि आयत में इक़्तिदार को अक़रबा परवरी का ज़रिया बनाने का हुक्म नहीं है, बल्कि इक़्तिदार की लालच में अइज़्ज़ा व अक़ारिब पर बेजा ज़ुल्म करने की मुमानअत है, इसलिए कि साहिबे इक़्तिदार आम तौर से अपने क़रीबी रिश्तेदारों से ज़्यादा ख़तरा महसूस करता है।

अल्लाह के एहकामात की पासदारी न करने वाले के अंजामकार को बताते हुए आख़िरी आयत में फ़रमाया गयाः "यही लोग पूरे दिवालिया हैं।"

आयत के इस टुकड़े का ऊपर से निहायत लतीफ़ रब्त है, आम तौर पर हक़ तलफ़ी करने वाला अपने मज़मूम अग़राज़ को पूरा करने के लिये यह काम करता है और अपनेआप को फ़ायदे में तसव्वुर करता है, क़तअ रहमी में यह खुदगर्ज़ी बहुत नुमायां नज़र आती है, और बेहिस इन्सान अपनी इस तर्ज़े अमल से ख़ुश भी होता है कि बहुत कुछ दूसरों का माल दाब लिया है। इसी तरह इन्सान ख़ुदा परस्ती से इसलिए दूर भागता है कि उसमें क़दम–क़दम पर शरई पाबन्दियां नज़र आती हैं और बेलगाम ख़्वाहिशात को लगाम दी जाती है। इसलिए ऐसा शख़्स नफ़्स परस्ती और ख़्वाहिशात की तकमील के लिये झूठे ख़ुदाओं का सहारा लेता है, जहां हलाल व हराम का कोई तसव्वुर ही नहीं, फिर यह समझता है कि दुनिया भी बन गयी और आख़िरत भी हाथ से न गयी। ऐसा शख़्स कितना नादान है, हक़ीक़त में यह शख़्स कंगाल है, आयत ने साफ़ बता दिया कि फ़साद फ़िलअर्ज़ की कोशिश करने वाले हक़ीक़त में महरूम हैं, आख़िरत के यक़ीनी महरूम और दुनिया में भी उनका अंजाम अक्सर तबाही व बर्बादी के सिवा कुछ नहीं होता है।

मज़ीद आयत में यह भी बता दिया गया है कि अल्लाह से रिश्ता कट जाने के बाद इन्सान के कामों का महवर दुनिया की ज़िन्दगी होती है। उनके काम इसी के एतराफ़ चक्कर काटते हैं। यह चीज़ जहां पैदा हो, वहीं अमल की हयात ख़त्म हुई, अमल ज़िन्दा रहता है ख़ालिक़े कायनात से वाबस्तगी पर, वरना उसमें ज़िन्दगी मफ़कूद रहती है, ऐसे लोगों का हाल कुरआन की ज़बानी कुछ यूं हैः "क्या तुम्हें न बतलाएं कि अमल के बर्बाद कौन लोग हैं, वह हैं जिनकी कोशिशें दुनियावी ज़िन्दगी में भटक कर रह गयीं, जबकि उनका ख़्याल यह था कि वे बड़े शानदार काम अंजाम दे रहे हैं।"

इसी तरह इन्सान अपने और अपने बीवी–बच्चों के लिये अल्लाह के एहकाम पामाल करता है, दूसरों के हुकूक़ मारता है, अग़राज़ का बन्दा बनता है और मफ़ादात का पुजारी बनकर ज़िन्दगी गुज़ारता है, मज़ीद इस बुनियाद पर अपनेआम को ख़ुशक़िस्मत समझता है। उसके बारे में अल्लाह तआला का इरशाद हैः "कह दीजिए कि अस्ल बर्बाद तो वह है जो अपनेआप को और अपने मुताल्लिक़ीन को क़यामत के दिन खो देंगे, याद रखो यही खुल्लमखुल्ला खो देना है।"

दरअस्ल एतदाल और तवाज़ुन से निकल जाने का नाम फ़साद है। चाहे इन्सान कुछ हटे या बहुत ज़्यादा अलग हो जाये। गोया अदमे तवाज़ुन या नाहमवारी को "फ़साद" कहा जायेगा, इसी के मुक़ाबले में तवाज़ुन और एतदाल को "सलाह" कहते हैं, जिसके ज़रिये निज़ाम दुरूस्त रहता है, इसी का नाम इस्तिक़ामत है।

मैय्यत को गुस्ल दिलाने के शरई एहकाम

मुफ्ती राशिद हुसैन नदवी

मैय्यत को गुस्ल दिलाना ज़िन्दों पर वाजिब–ए–किफ़ाया है। यानि बाज़ अदा करें तो बक़िया से वजूब साक़ित हो जायेगा। और अगर कोई भी अदा न करे तो सब गुनाहगार होगें।

मैय्यत को गुस्ल दिलाते वक़्त मुन्दरजा ज़ेल उमूर का ख़्याल रखा जायेः

1– जिस तख़्त या तख़्ते पर मैय्यत को नहलाना हो सबसे पहले उसको ताक़ अदद (तीन, पांच या सात बार) लोबान की धूनी दी जाये। इसलिए कि हज़रत जाबिर रज़ि0 फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह (स0अ0) ने फ़रमायाः जब तुम मैय्यत को धूनी दिया करो तो तीन मर्तबा दिया करो। (मुसनद अहमद)

फिर उस पर मरने वाले को इस तरह लिटा दिया जाए कि क़िब्ला उसके दाहिनी तरफ़ हो, अगर कोई परेशानी हो तो जिस तरह चाहे लिटा सकता है।

फिर मरने वाले को चादर इत्यादि उढ़ाकर उसके कपड़े उतार लिये जाएं और नाभि से लेकर पिंडली तक कोई मोटा कपड़ा (लुंगी इत्यादि) पहना दिया जाए। फिर नहलाने वाला अपने हाथ में दस्ताना पहन ले या कोई कपड़ा लपेट ले और उसको इस्तिंजा कराए। यानि मरने वाले की शर्मगाहों को धोए। यह ध्यान रहे कि ज़िन्दा व्यक्ति की तरह ही मरने वाले की शर्मगाह को देखना या छूना मना है। अतः नहलाने और इस्तिंजा कराने में इसका ख़्याल रखना चाहिये।

2– इसके बाद मरने वाले को वुज़ू कराया जाए और उसके वुज़ू का क्रम यह होगा कि पहले तीन बार चेहरा धुलाया जाए। फिर उंगली में कोई बारीक कपड़ा लपेट कर या रुई तर करके तीन–तीन बार होंट, दाढ़, मसूढ़े इत्यादि को साफ़ किया जाए। फिर उसी तरह नाक को साफ़ कर दे। मौत जब नापाकी की हालत या माहवारी की हालत या प्रसव की हालत में हुई हो तो उसकी (नाक और मुंह के अन्दर की सफ़ाई) का ख़ास ख़्याल करे इसके बाद बाक़ी का वुज़ू नमाज़ के वुज़ू की तरह करा दे।

वुज़ू का हुक्म खुद आंहज़रत (स0अ0) ने हदीस में दिया है, आपने मैय्यत के गुस्ल का तरीक़ा बताते हुए यह भी फ़रमायाः गुस्ल की इब्तिदा मैय्यद के दाहिने हिस्से नीज़ उसके आज़ा–ए–वुज़ू से करो।

3– फिर सर और दाढ़ी के बालों को ख़ित्मी या साबुन इत्यादि किसी ऐसी चीज़ से साफ़ कर दे जिससे सफ़ाई अच्छी तरह हो जाती है और अगर बाल नही है तो साबुन वग़ैरह की ज़रूरत नहीं है।

4– अब इसके बाद जिस्म पर पानी डालना है। लिहाज़ा पानी डालने से पहले मुनासिब यह है कि नाक और मुंह में रूई भर दी जाये, ताकि यह आज़ा पानी भरने से महफ़ूज़ रहें। फिर बैरी के पत्ते डालकर पकाया हुआ नीम गरम पानी लिया जाये, ज़्यादा गरम पानी इस्तेमाल न किया जाये, बस उतना गरम होना चाहिये जितना ज़िन्दा आदमी करता है, और बेरी के पत्ते डालकर पकाया हुआ पानी इसलिए लिया जाता है कि हदीस शरीफ़ में इसका हुक्म दिया गया है।

और इसकी हिकमत यह है कि पानी के अन्दर सफ़ाई करने की ताक़त इससे बढ़ जाती है। अब इब्तिदा चूंकि मैय्यत के दाहिने हिस्से से करना है जिसका हदीस शरीफ़ में हुक्म दिया गया है, लिहाज़ा मैय्यत को बाएं करवट लिटा दिया जाये, ताकि उसका दाया हिस्सा ऊपर जाये और उस पर पहले पानी पड़े, फिर मैय्यत के सिर से इब्तिदा करते हुए पैरों तक तीन मर्तबा पानी डाला जाये। अगर ज़रूरत हो तो ताक़ अदद में इस पर इज़ाफ़ा भी किया जा सकता है। इसका ख़्याल रखा जाये कि पानी इस तरह डाला जाये कि मैय्यत के बाएं करवट तक पहुंच जाये, फिर मैय्यत को दाहिनी करवट और मुन्दरजा बाला तरीक़े के मुताबिक़ और उसी तादाद में सर से पैर तक पानी डाला जाये, पेट पर आहिस्ता–आहिस्ता दबाव डालिये और मलिये, और अगर कोई नजासत निकले तो

उसको धो डालिये। वुज़ू या गुस्ल के दोहराने की कोई ज़रूरत नहीं है। फिर मैय्यत को बाएं करवट लिटा दे, और उसके सर से पैर तक काफ़ूर मला हुआ पानी तीन मर्तबा डालिये, अब गुस्ल मुकम्मल हो गया है, लिहाज़ा सारा बदन किसी कपड़े से पोंछ डाले।

चुनान्चे हदीस में हज़रत उम्मे अतिया रज़ि0 की रिवायत आयी है फ़रमाती हैं कि हमारे पास रसूलुल्लाह (स0अ0) उस वक़्त तश्रीफ़ लाये जब हम आपकी बेटी (हज़रत ज़ैनब रज़ि0) को गुस्ल दिला रहे थे, तो आप (स0अ0) ने फ़रमायाः उनको तीन बार या पांच बार, या ज़रूरत हो तो उससे भी ज़्यादा बार पानी और बेरी की पत्ती से गुस्ल दिलाओ, और आख़िरी बार काफ़ूर (या फ़रमाया) कुछ काफ़ूर डाल दो, और जब फ़ारिग़ हो जाना तो मुझे इत्तेला कर देना। ऊपर जो तादाद और तरतीब बयान की गयी है, वह मसनून है, अगर इस तरतीब का ख़्याल नहीं रखा या सिर्फ़ एक दफ़ा गुस्ल दिलाया तब भी वजूब ज़िम्मा से साक़ित हो जायेगा। अगर कहीं बेरी के पत्ते या अश्नान न मिले तो नीम गरम से ख़ालिस गुस्ल दिला देना भी काफ़ी होगा।

5– मैय्यत के बालों में कंघी करना, या जिस्म के किसी हिस्से के बाल या नाख़ून काटना मना है, सब चीज़ों को उनके हाल पर छोड़ देना चाहिये, अलबत्ता टूटे हुए नाख़ून को अलग करने की इजाज़त है।

गुस्ल किसको दिलाना चाहिये?

1– सवाब इसमें है कि मरने वाले का क़रीबी रिश्तेदार उसको नहलाए (मरने वाला मर्द हो तो मर्द रिश्तेदार और औरत हो तो रिश्तेदार औरतों में से कोई हो) और अगर रिश्तेदारों में कोई नहलाने के मसले से अनभिज्ञ हो तो कोई भी दीनदार, क़ाबिल और भरोसे वाला व्यक्ति नहलाए, बाज़ इलाक़े में रिश्तेदार इस अमल से दूर रहते हैं, और नाई वग़ैरह से यह काम करवाते हैं, यह ख़िलाफ़े ऊला अमल है।

2– अगर पति की मौत हुई हो तो मर्दों की ग़ैर मौजूदगी में उसकी बीवी उसको नहला सकती है। लेकिन बीवी की मौत हुई हो तो पति के लिये उसको नहलाना अहनाफ़ के नज़दीक सही नहीं है। बाज़ अइम्मा इसकी इजाज़त देते हैं।

3– जब गुस्ल दिलाने के लिये जिन्स मुआफ़िक़ मौजूद न हों: अगर मर्द की मृत्यु हुई हो तो और कोई मर्द नहलाने वाला नहीं है, केवल औरतें हैं तो अगर उसकी महरम औरतें न हों तो उसे किसी कपड़े से तयम्मुम करा दें। महरम औरतें हैं तो कपड़े के बग़ैर तयम्मुम करांएगी।

इसी तरह औरत को नहलाने के लिये औरतें न हों तों महरम मर्द बग़ैर कपड़े के तयम्मुम करा सकता है। ग़ैर महरम कपड़े से तयम्मुम कराए।

बिल्कुल छोटी बच्ची को मर्द और बिल्कुल छोटे बच्चे को औरत भी नहला सकती है। बिल्कुल छोटे होने का मतलब यह है कि हद्दे शहवत को न पहुंचा हो।

4– सवाब इसमें है कि नहलाने वाला पाक हो। अगर वह किसी कारण से नापाक है अथवा, माहवारी या प्रसव में से हो तो नहलाना मकरूह तहरीमी है। लेकिन अगर केवल वुज़ू नहीं है तो अच्छा तो ये भी नहीं है लेकिन मकरूह नहीं होगा।

5– ख़न्सा मुशक्कल (हिजड़ा) के लिये मर्द या औरत का नहलाना ठीक नहीं। और खुद ख़न्सा को भी कोई न नहलाए। किसी कपड़े से तयम्मुम करा दिया जाए। इसी तरह ख़न्सा मुशक्कल के लिये जायज़ नहीं है कि किसी मर्द या औरत को गुस्ल दिलाये।

जब मरने वाले का केवल कुछ शरीर मिले

अगर किसी मरने वाले का सर सहित आधा शरीर पाया जाए या बग़ैर सिर के आधे शरीर से अधिक पाया जाए तो उसे नहलाया जाएगा और जनाज़े की नमाज़ भी पढ़ी जाएगी अन्यथा नहीं।

जब मरने वाले के मुसलमान होने पर शक हो

अगर कोई लाश पायी जाए और पता न चलता हो कि यह मुसलमान है कि काफ़िर, तो अगर कोई पहचान मौजूद है तो उसका विश्वास किया जाएगा वरना अगर दारुलइस्लाम में मिले तो मुसलमान मानकर नहलाया जाएगा और नमाज़ पढ़ी जाएगी अन्यथा नहीं।

जब मुसलमान और ग़ैर मुसलमान मर्द मिल जांए

मुसलामन और काफ़िर मर्द मिल जांए और किसी भी प्रकार से पहचान संभंव न हो तो नहला तो सबको दिया जाएगा, लेकिन नमाज़–ए–जनाज़ा में कुछ स्पष्टताएं और मतभेद हैं। चलन में ये है कि सबकी नमाज़–ए–जनाज़ा पढ़ी जाएगी।

.....शेष पेज 20 पर

ख़ुदा का ख़ौफ़

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

हदीसः हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 से मरवी है कि रसूलुल्लाह स0अ0 ने इरशाद फ़रमायाः अल्लाह तआला का ख़ौफ़ हिकमत का सरचश्मा है। (शोएबुल ईमानः 744)

फ़ायदाः ख़ौफ़े ख़ुदा इन्सान के अन्दर एहसासे ज़िम्मेदारी, ख़ुदएतमादी, और हुस्ने अमल की इस्तेदाद पैदा करता है और इन्सान को शैतानी मक्र व फ़रेब से बाज़ रखता है। ख़ौफ़े ख़ुदा के यह वह ख़्वास हैं जिनके पेशेनज़र हदीस शरीफ़ में इसको हिकमत का सरे चश्मा और क़ुरआन मजीद में कामयाबी की शाहे कलीद बताया गया है। इरशादे इलाही हैः

"ऐ ईमान वालों! अल्लाह से डरते रहो और उस तक पहुंचने का वसीला तलाश करो, और उसके रास्ते में जान खपाते रहो, ताकि तुम फ़लाह पाओ।"

अल्लाह से डर का जज़्बा तवील रियाज़तों या दुश्वार गुज़ार मराहिल का मुतक़ाज़ी नहीं है। बल्कि हर वह साहिबे ईमान जो सिद्क़े दिल से अल्लाह व रसूल व आख़िरत पर ईमान रखता हो, उस जज़्बे का हामिल बन सकता है। और उस जज़्बे का हामिल इन्सान अपनी ज़िन्दगी में किसी मुसीबत या परेशानी का इज़ाफ़ा नहीं करता बल्कि यह जज़्बा उसके शुऊर और फ़रासते ईमानी के फ़रोज़ा करने में मदद व मुआविन हेाता है। और हक़ व बातिल की तफ़रीक़ करने की सलाहियत अता करता है। जिसकी बुनियाद पर ऐसा इन्सान अल्लाह तआला के न ज़दीक़ मक़ामे बलन्द हासिल करता है और उख़रवी ज़िन्दगी में बेशबहा इनामात का मुस्तहिक़ क़रार पाता है। क़ुरआन में अल्लाह से डरने वालों, बिला शुब्हा जो बिन देखे अपने रब से डरते हैं उनके लिये बख़्शिश है और बड़ा अज्र है। ख़ौफ़े ख़ुदा का एक बड़ा फ़ायदा यह भी है कि इन्सान को इस्तिक़ामत नसीब होती है और ख़ुशी व ग़म के मौक़े पर एहकामाते इलाहिया की तामील में कोई कमी वाक़े नहीं होती। इसी तरह मुआशरती ज़िन्दगी में भी ईमानदारी की सिफ़त ऐसे शख़्स का लाज़मी जुज़ बन जाती है। यहां तक कि तन्हाई में ख़ुदा तआला की हुदूद का उसको लिहाज़ रहता है और अगर उसकी ज़ाती ज़िन्दगी में कोई नाख़ुशगवार वाक़्या भी पेश आ जाये तब भी वह अपना कारसाज़े हक़ीक़ी रब्बुल आलमीन के सिवा किसी को नहीं समझता। दर हक़ीक़त एक साहिबे ईमान की ज़िन्दगी के यही वह औसाफ़ हैं जो उसकी ईमानी बसीरत व फ़रासत को ग़ैर मामूली जिला बख़्शते हैं।

ख़ौफ़े ख़ुदा पैदा करने का एक बड़ा ज़रिया आयाते इलाहिया में तदब्बुर है। यानि आसमान व ज़मीन में अल्लाह तआला की बेशुमार बिखरी हुई निशानियों में ग़ौर व फ़िक्र करना। इस ग़ौर व ख़ौज़ से इन्सान की आंखें खुल जाती हैं। और वह यह यक़ीन कर लेता है कि एक ऐसी ज़ात ज़रूर मौजूद है जिसके हाथ में कुल कायनात की ज़माम है। क़ुरआन में अल्लाह तआला की निशानियो का इल्म रखने वालों को अल्लाह से हक़ीक़ी डरने वाला बताया गया है। इरशाद है "अल्लाह से उसके वही बन्दे डरते हैं जो इल्म रखते हैं।"

जो लोग अल्लाह तआला से नहीं डरते और ख़ुद को ख़ुदाई गिरफ़्त से महफ़ूज समझते हैं उनके अन्दर यह ज़ोम होता है कि अल्लाह तआला की सरज़निश सरकशों और बाग़ियों के लिये है और हमारी ज़िन्दगी इस्लामी सांचे में ढली हुई है। अल्लाह तआला उनकी मुख़्तलिफ़ हैसियतों से गिरफ़्त करता है। अवलन जान व माल में नुक़सान पहुंचाकर उनको इस्लाह के मवाक़े अता करता है लेकिन अगर वह इसको महज़ इत्तिफ़ाक़ी चीज़ समझते हैं तो फ़िर एक मरहला वह आता है कि ऐसे लोगों की सही और ग़लत में सलाहियत भी सल्ब हो जाती है और उनकी ज़िन्दगी का मक़सद सिवाए खाने–पीने के और कुछ बाक़ी नहीं रह जाता। मौजूदा दौर में लोगों की बढ़ती बेराह रवी और लामक़सदियत का यह एक बुनियादी राज़ है कि वह महज़ रिवायती ज़िन्दगी गुज़ारने पर क़ाने हैं और मारिफ़ते इलाही या ख़ौफ़े ख़ुदा के हुसूल का कोई ज़ज़्बा उनके अन्दर नहीं है इसलिये कि उनके पास इतना ही मज़हबी इल्म है जो उनको खानदानी तौर पर वरसे में हासिल हो गया। अगर वह बराहरास्त मज़हब के मुताले की फ़िक्र करते तो यक़ीनन उनकी ज़िन्दगी नमूना की होती।

उत्पीड़ित भावना की बीमारी

मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

भारतीय मुसलमान एकमात्र अल्पसंख्यक हैं जिनकी सम्सयाएं थमने का नाम नहीं लेती। आये दिन किसी न किसी समस्या के बोझ तले वे दबते ही जा रहे हैं। भविष्य की चिंताओं तथा नयी नस्ल की उलझनों ने उन्हें चिन्तित कर रखा है। फिर भी इन समस्याओं से छुटकारे की राह ढूंढने हेतु वे प्रयासरत हैं। आये दिन किसी न किसी शीर्षक के तहत सम्पोज़ियम, सेमीनार, लेक्चर तथा भाषण होते रहते हैं। लेख लिखे जाते हैं तथा साठ सालों से जमा होने वाली समस्याओं को हर व्यक्ति दोहराता रहता है।

लेकिन इन सारे प्रयासों का केन्द्र यही रहता है कि मुसलमानों की सारी समस्याएं दूसरों की पैदा की हुई हैं और वे स्वयं मासूम हैं। उन्हें यक़ीन दिलाया जाता है कि उनके विरोधियों ने उनका जीवन नर्क बना रखा है। हर ओर से उन पर तथा उनके श्रेष्ठ मूल्यों पर आक्रमण है। एक यलग़ार है जो हर ओर से है तथा लगातार है। वे हर मैदान में आगे बढ़ना चाहते हैं लेकिन शासन उन्हें आगे बढ़ने नहीं देता। उनको मौलिक अधिकार प्राप्त नहीं है और उनके साथ द्वितीय श्रेणी के नागरिकों जैसा बर्ताव किया जा रहा है। अर्थात मुसलमानों की पस्ती तथा उनके पिछड़ेपन में स्वयं उनका कोई रोल नहीं है। सारा दोष सरकार का या साम्प्रदायिक संस्थाओं का है।

यह शिकायतें क्रमवार पिछले सत्तर सालों से जारी हैं और इसी सीना पीटने में उनके सत्तर साल गुज़र गये। जबकि सारी दुनिया बदल गयी। सारे लोग बदल गये। देश के दूसरे अल्पसंख्यक बदल गये। लेकिन मुसलमान धैर्य व धीरज की मूरत बना हुआ कमोबेश वहीं खड़ा है जहां सात दहाई पहले खड़ा था।

इस बात से इनकार नहीं कि मुसलमान इस देश में और लगभगर सारी दुनिया में अत्याचार के लिये चिन्हित कर दिये गये हैं। योजनाबद्ध रूप से उनको निशाना बनाया जाता है तथा उनके खिलाफ़ साज़िशें की जाती हैं। लेकिन इस एहसास के बाद ज़रूरी था कि मुसलामनों में अत्याचार के प्रति अनुभूति तथा उसके प्रति जागरुकता पैदा हो जो कि एक ज़िन्दा क़ौम की पहचान है। अत्याचार की अनुभूति और उसके प्रति जागरुकता एक अलग चीज़ है और उत्पीड़ित होने की भावना बिल्कुल दूसरी चीज़ है। पहली चीज़ जागरुक होने की निशानी तथा होशमन्दी के साथ योजना बनाने का पहला क़दम है जबकि दूसरी चीज़ संकुचित मानसिकता की पैदावार जिसके नतीजे में हौसले की सारी उमंगे तथा आगे बढ़ने के सारे जज़्बात ढेर हो जाते हैं।

उत्पीड़ित होने की भावना वह ख़तरनाक बीमारी है जो पीड़ित के हाथ–पैर मारने की ताक़त को भी ख़त्म कर देती है। हालात बदलने की तमन्ना व क्रान्ति की इच्छा उसक दिल व दिमाग़ में कोई तड़प पैदा नहीं कर पाती। इदारे व हौसले उसकी ज़िन्दगी से रुख़्सत हो जाते हैं और फिर एहसासे कमतरी उसे घुन की तरह चाट जाती है।

आज भारत का मुसलमान इसी हीन भावना का शिकार है। जिसका सबसे बड़ा उदाहरण यह है कि मुसलमानों ने अपने स्वयं का जायज़ा लेने को बिल्कुल भुला दिया है। अतः राजनीतिक समस्याएं हो या आर्थिक तंगी, चारित्रिक संकट हो या इस्लामी अवशेषों से छेड़छाड़ वे हर परेशानी का कारण दुश्मनों की कार्यवाहियों में तलाश करते हैं यहां तक कि निकाह व तलाक़ और वारिस जैसे शुद्ध धार्मिक मामलों से ग़फ़लत भी दुश्मनों की साज़िश करार देते हैं। जबकि यह कहा जा सकता है कि राजनीतिक स्तर पर दुश्मन की योजना और उसकी साज़िशें हम पर असर कर सकती हैं, लेकिन सामाजिक, शैक्षिक तथा धार्मिक क्षेत्रों में सामूहिक पतन के ज़िम्मोदार ख़ुद मुसलमान हैं। हमारी शिक्षा व्यवस्था, हमारा समाज तथा हमारी सामाजिकता हर प्रकार से हमारी पस्ती व ज़िल्लात और हमारी ग़फ़लत स्वपड़ताल व स्वयं की जांच न करने की खुली हुई मिसाल है।

हक़ीक़त यही है कि मुसलमान उत्पीड़ित होने की भावना के चलने अपनी कार्यप्रणाली, कार्यक्षमता मंज़िल पाने की अपनी चाहत को भुला दिया। वे भूल बैठे के उनकी हैसियत ख़लीफ़तुल अर्ज़ (धरती पर ईश्वर के नायब) की है। वे भलाई की ओर बुलाने वाले तथा बुराई

से रोकने वाले हैं। हालात की लहरों पर बहना उनका काम नहीं। उनका काम हालात का रुख़ मोड़ना है। हां! अगर उनको थोड़ा–बहुत कुछ याद है तो बस यह कि उनके पूर्वज इस देश के बादशाह थे और उन्होंने आठ सौ साल तक राज किया है। इसलिए कभी–कभी उनके अन्दर सुल्तानी का जोश ज़रूर पैदा होता है लेकिन जब "सच्चर कमेटी" का आइना नज़र आता है तो सारा नशा उड़ जाता है।

उत्पीड़ित होने इस भावना ने मुसलमानों के स्वभाव में दो महत्वपूर्ण बदलाव कर दिये हैं। एक बदगुमानी दूसरे हीन भावना। अतः एक ओर वे अपने धार्मिक व राजनीतिक नेतृत्वकर्ता से अधिकतर बदगुमान रहते हैं बल्कि घृणा करने की स्थिति में चले जाते हैं और उनकी सालों की निस्वार्थ भाव की सेवा को किसी अफ़वाह या आरोप के आधार पर भुला देने में कोई देर नहीं लगाते। यहां तक कि विशुद्ध वैचारिक व राजनीतिक समस्याओं में बुद्धिजीवियों व नेताओं के मतभेद को ग़ैरों की साज़िश तथा साम्प्रदायिक शक्तियों की एक शाख़ घोषित कर देने से नहीं चूकते। और दूसरी ओर हर नई सरकार के संबंध में वे खुश फ़हमी में पड़ जाते हैं और एक मायूस, बेबस और मजबूर क़ौम की तरह नवाज़िश व करम की आस लगा बैठते हैं।

मुसलमानों की समस्याओं का मूलभूत कारण दीन से दूरी और उसके आदेशों हटना है। सोच–विचार के आधार से भी उनका काम करने का तरीक़ा अविवेकपूर्ण है। उनके सामने दर्जनों समस्याएं हैं लेकिन आज तक वे उन समस्याओं के संबंध से वरीयता क्रमांक का भी निर्माण नहीं कर सके कि उनमें से कुछ महत्वपूर्ण व आधारभूत समस्याओं को चिन्हित करके पूरी ताक़त उन पर लगायी जा सके। वे एक साथ सारी समस्याओं की सूची तो प्रस्तुत कर देते हैं लेकिन काम की शुरूआत कहां से की जाये यह तय नहीं कर पाते, जिसके परिणामस्वरूप अधीरता व विचलता बढ़ती जाती है तथा समस्याओं की गुत्थी अधिक उलझ कर रह जाती है। इसलिए अमली शक्ल यह है कि समस्याओं को वरीयतानुसार सूचीबद्ध करने का ऐजेन्डा तय किया जाये तथा उसके लिये एक कार्यप्रणाली तैयार करके उसमें रंग भरने की कोशिश की जाये। लेकिन इसके लिये सबसे पहले हीन भावना को दूर करके आत्मविश्वास को परवान चढ़ाना होगा। दुश्मनों की साज़िशों का रोना रोने के बजाय उनका सामना करने की चिन्ता करनी होगी तथा पूरी वैचारिक व शैक्षिक शक्ति के साथ रक्षात्मक के बजाय आक्रामक प्रणाली अपनानी होगी और यह उसी समय संभव होगा जब हमारे दिलों से हीन भावना दूर होगी और हम और हम स्वयं अपनी पड़ताल एक जीवित क़ौम की भांति करेंगे तथा इसके लिये धार्मिक शिक्षाओं से अमली रूप में परिचित होने के साथ–साथ आख़िरत (परलोक) का मज़बूत अक़ीदा (आस्था) ज़रूरी है। वरना समस्याएं आती रहेंगी और हम अपना रोना रोते रहेंगे।

खुदा ने आज तक उस क़ौम की हालत नहीं बदली।
न हो जिसको ख़्याल खुद अपनी हालत बदलने का।।

शेषः मैय्यत को ग़ुस्ल दिलाने के शरई एहकाम

जब पानी उपलब्ध न हो

अगर नहलाने के लिये पानी उपलब्ध न हो तो तयम्मुम करा दिया जाएगा। फिर पानी मिल जाए तो दोबारा नहलाया जाएगा।

जब मरने वाले की कुछ गुण या अवगुण प्रकट हों

अगर मरने वाले का कोई गुण, चेहरे की चमक इत्यादि नज़र आये तो इसकी चर्चा करना अच्छा है लेकिन यदि कोई अवगुण नज़र आये तो नज़रअन्दाज़ करे और किसी से चर्चा न करे। इसलिये कि हदीस में आया हैः हज़रत इब्ने उमर फ़ारूक़ फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह (स0अ0) ने फ़रमायाः "अपने मर्दों की खूबियां बयान करो और उनके ऐबों को नज़रअन्दाज़ करो।"

यद्यपि अगर मरने वाला ज़िन्दगी में किसी खुली गुमराही या बेराही का शिकार रहा हो तो दूसरों की नसीहत के लिये उसका ऐब बताने में कोई हर्ज नहीं है।

ज़रुरी मसला

मरने वाले को नहलाने के बाद खुद भी नहा लेना सवाब का काम है। इसलिए कि हदीस शरीफ़ में इसका हुक्म दिया गया है, लेकिन फ़र्ज़ या वाजिब नहीं है।

अगर कोई बग़ैर मज़दूरी के नहलाने वाला न मिले तो मज़दूरी देकर भी नहलवाया जा सकता है। लेकिन नहलाने वाले के लिये पैसा लेना अच्छा नहीं है।

प्रशंसा व धन्यवाद

ज़बान के लिए बड़े गर्व की बात है कि वह अल्लाह की प्रशंसा एवं अल्लाह का शुक्र के शब्दों से तर रहे। यूं भी यह बड़ी एहसान फ़रामोशी है कि एहसान करने वाले का धन्यवाद न दिया जाए और उसकी प्रशंसा न की जाए। अल्लाह तबारक व तआला ने हम पर, आप पर अनगिनत एहसान किए हैं और हर समय उसकी नेमतों से हम लोग फ़ायदा उठाते रहते हैं। दाना, पानी, हवा रोशनी, सेहत व सुकून, शांति व सलामती और उनके जैसे बहुत से उपकार हैं जो अल्लाह ने हमको, आपको दे रखें हैं, जिनका कोई बदल नहीं है। उनमें से यदि कोई नेमत हमसे छीन ली जाए, तो ज़िन्दगी गुज़ारना मुश्किल हो जाए। लेकिन इनसान की फ़ितरत नाशुक्री और एहसान फ़रामोशी की ओर अधिक झुकाव रखती है। कुरआन में कहा गया है:

"और जब हम इनसान पर ईनाम करते हैं तो वह ऐराज़ करता है और अकड़ता है और जब उसको कोई तकलीफ़ पहुंचती है तो वह मायूसी का शिकार हो जाता है।" कुरआन शरीफ़ में हम्द व शुक्र का वर्णन:

अल्लाह तआला ने अपने सारे बन्दों को एहसान मानने व प्रशंसा करने की शिक्षा दी है। सूरह फ़ातिहा जो नमाज़ की हर रकआत में पढ़ी जाती है और कुरआन शरीफ़ की सबसे पहली सूरह है उसकी शुरूआत भी हम्द से की गयी है:

"सब तारीफ़ है अल्लाह की जो सारे जहानों का पालने वाला है।"

फिर जगह–जगह अल्लाह ने अपने एहसान की निशानदेही की है और प्रशंसा व शुक्र के शब्दों से अपने बन्दों को परिचित कराया है। पूरे कुरआन मजीद में अलग–अलग रूप से प्रशंसा के शब्द आए हैं। कहीं ख़ुद तारीफ़ की है और कहीं उन नेक लोगों का वर्णन किया है जिनकी ज़बान अल्लाह की तारीफ़ से तर रहती हैं। कहीं हम्द व शुक्र की शिक्षा दी है। अल्लाह तआला अपने बन्दों का ध्यानाकर्षित करके कहता है:

"बस तुम लोग मुझे याद करो, मैं तुमको याद रखूंगा, और मेरा शुक्र करो और नाशुक्री मत करो।"

दूसरी जगह शुक्र करने के ईनाम का इस प्रकार वर्णन किया गया है:

"अगर तुम शुक्र करोगे तो मैं तुमको और ज़्यादा नेमतें अदा करूंगा।"

हज़रत लुकमान अलै० को अल्लाह तआला ने ज्ञान व तत्वदर्शिता दी थी तो आभार प्रकट करने का आदेश भी दिया था।

"और हमने लुक़मान को बुद्धिमता प्रदान की कि अल्लाह का शुक्र करते रहो, और जो शुक्र करेगा वह अपने व्यक्तिगत लाभ हेतु करता है और जो नाशुक्री करेगा तो अल्लाह बेनियाज़ ख़ूबियों वाला है।"

मौलाना मुहम्मद सानी हसनी रह०

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Postal Reg. No.
RBL/NP -19

Issue: 03 MARCH 2018 VOLUME: 10

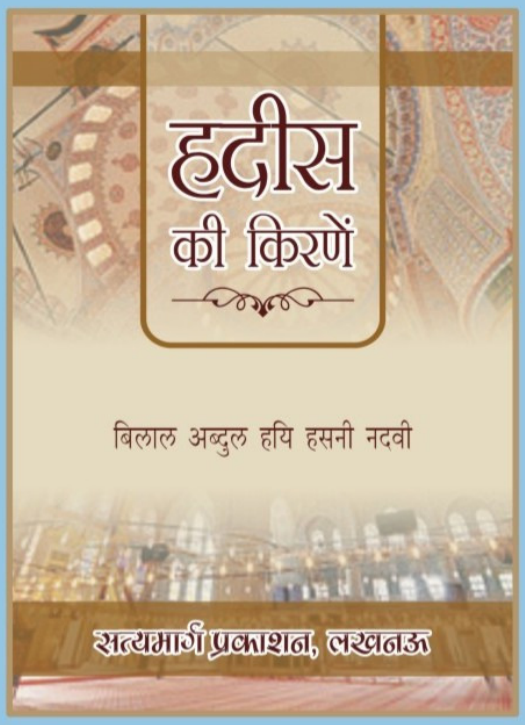

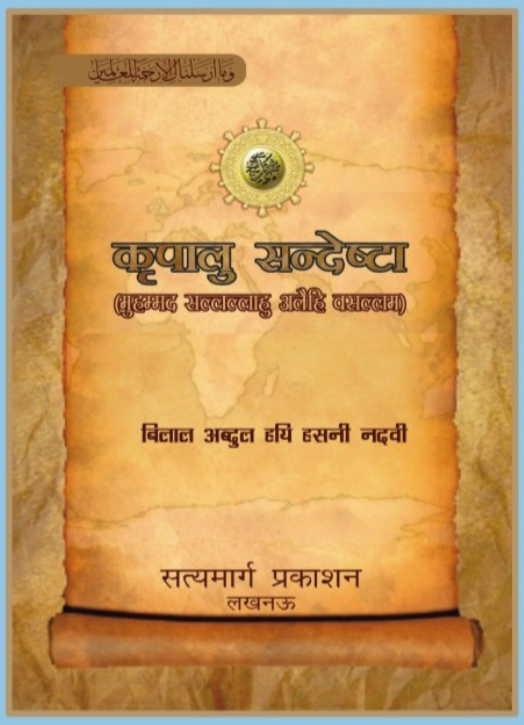

DECLARATION OF OWNERSHIP AND OTHER DETAILS
FORM 4 RULE 8

Name of Paper:	Arafat Kiran
Place of Publication:	Raebareli
Periodicity of Publication:	Monthly
Chief Editor:	Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
Nationality:	Indian
Address:	Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli (U.P.) 229001
Printer/Publisher:	Mohammad Hasan Nadwi
Nationality:	Indian
Address:	Maidanpur, Post. Takiya Kalan, Raebareli (U.P.) India
Ownership:	Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi

I, Mohammad Hasan Nadwi, printer/publisher declare
that the above information is correct
to the best of my knowledge and belief.

(March 2018)

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI
Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile:9565271812
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak
Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.